ईशान वर्मन नाटक

मिश्रबन्धु

भूमिका

यह एक ऐतिहासिक नाटक है जिसमें मुख्यतया कान्यकुब्ज नरेश महाराजा ईशान वर्मन की कथा है और अमुख्यतया भारत पर हूण आक्रमण उसकी विजय और अन्त में पराजय का विवरण है। पहली हूण वार (कई युद्धों का समूह) सन् ४५५ से ४६७ ई तक हुई। यही पूरा समय सम्राट् स्कंदगुप्त का था। आपने कई युद्धों में घोर पराक्रम दिखलाकर हूण सम्राट तथा उसके सहायक सासानी और कुशान बादशाहों को पराजित कर दिया तथा युद्ध में वे तीनों मारे गये। इसके पीछे भी सन् ५ तक गुप्त साम्राज्य सबल रहा अथवा समझा गया। सन् ४६७ में सम्राट स्कंदगुप्त का शरीरपात केवल ३ वर्ष की अवस्था में हो गया। आपके पीछे पुरगुप्त प्रथम बालादित्य और द्वितीय कुमारगुप्त सन् ४७६ पर्यन्त एक दूसरे के पीछे सम्राट् हुये। प्रथम बालादित्य ने महायानीय बौद्धमत ग्रहण किया। मागध गुप्तों में यही मत अन्त पर्यन्त चला और बहुत करके इसी कारण से इस प्रसिद्ध राजघराने का अन्त हुआ। ४७६ से ५ तक बुधगुप्त प्रकाशादित्य का समय रहा। आपका अन्तिम सिक्का ४९६ का मिलता है। इसके पीछे इनका अस्तित्व अनुमान पर अवलंबित है। पीछे इनके पुत्र तथागत गुप्त और फिर तत्पुत्र भानुगुप्त दूसरे बालादित्य मागध सम्राट हुये।

सन् ५ से ५१ के भीतर किसी समय किन्हीं अज्ञात कारणों से गुप्त कुल में विश्लेषण होकर गौड गुप्त का एक द्वितीय शासक घराना स्थापित हुआ। उनका आदिम अधिकार गौड (उत्तरी बंगाल प्रान्त) में हुआ। समझ पड़ता है कि

गुप्ता क बौद्ध हा जाने से उनके हिन्दू सैनिकों ने विप-ष किया और उनका नता हाकर कोइ हि दू गुप्त राजकुमार गौड़ का शासक हा गया। इस विश्लषण म एकाध छो ा माग युद्ध भी मम्भव है कि तु उसका कहा वणन नहीं मिला। सन् ५४४ का वामा-रपुर वाला एक ताम्र लेख मिलता है जिसमें बौद्ध मतावलंबा तृताय कुमार गुप्त गौड़श पाय जात हैं। आपकी किसा समय ई-ान वमन से मुठभेड हुइ जिसम पहल तो इनका पुत्र वामा-रगुप्त मारा गया कि तु आपने उन्हे हराकर साम्रा-य प- प्राप्त किया। यह प- आपन ५५ तक भागा कि तु अ त में (इशान वर्मन का जातने के पश्चात्) इ होंने अपना सजीव शरीर अग्नि स भस्म कर दिया तथा ईशान वर्मन भारत के सम्राट हाकर ५५४ तक इस वृह पद पर प्रति ठत रहे। जीतने के कइ वर्षों के पीछे कुमारगुप्त ने उस विजय की प्रसन्नता मे अपना शरी क्या - ध किया इसका काइ कारण नहीं लिखा है। समझ पडता है कि उस काल इशान के दबाव पडने पर हारन के स्थान म सजीव जल मरना उन्होंने श्रेष्ठ समझा हा क्योंकि उनके पीछे ईशान को तुर त ही हम सम्राट दखते हैं। वे कब तक इस पद पर रहे सो अज्ञात है कि तु सन् ५५४ वाला पहला सिक्का उनके उत्तराधिकारी पुत्र शववर्मन का मिलता है। शर्ववर्मन के पीछे उनके पुत्र सम्राट अव-तिवर्मन का पहला सिक्का ५७ का मिला है। इनका साम्रा-य काल सन् ६ तक समझा जाता है। इनके पीछे ग्रहवमन ६ ५ तक सम्राट् माने गये हैं। विष्णुवद्धन यशोधमन के वशधर प्रसिद्ध सम्राट हषवद्धन वैश्य की बहन रा-यश्री ग्रहवर्मन को ब्याही थीं। जब ग्रहवर्मन के शत्रुवों न कन्नौज रा-य पर आक्रमण करके इनका वध कर डाला तब हप वर्द्धन ने अपने पराक्रम से कन्नौज राज्य बचाया कि तु किसी उत्तराधिकारी के अभाव में बहन को गद्दी पर

दिलाया होगा और उन्हीं की इच्छा से स्वयं राज्य लिया होगा। ग्रन्थों में केवल इतना मिलता है कि हर्ष ने पहले भगिनी के साथ कन्नौज का राज्य किया और फिर बहुत अनिच्छा के साथ स्वयं गद्दी प्राप्त की। आप शासक होकर ६०६ से ६४७ तक साम्राज्य भोगते हैं। इनके पीछे गड़बड़ हो जाता है। शर्ववमन या अवन्ति वमन के समय महासेन गुप्त गौड़ नरेश थे जिन्होंने आसाम जीता और जिनकी बहादुरी के गीत उस ओर प्रचलित हैं। ये महाराज तीसरे कुमारगुप्त के पुत्र दामोदरगुप्त के पुत्र थे। हर्ष का साम्राज्य टूटने पर प्राय ६ म हम फिर हिन्दू गौड़ गुप्त नरेशों को कुछ वर्षों के लिये सम्राट पाते हैं। इसका विवरण इतिहास कथन में आगे आवेगा। ईशानवमन का वंश मौखरि कहलाता है। मुखर का शाब्दिक अर्थ नेता है। आपके पितामह आदित्य वमन हरिवमन के पुत्र तथा कान्यकुब्ज नरेश थे इन से पूर्व इस वंश का विवरण नहीं मिलता। औदित्य वर्मन को हर्षगुप्ता नाम्नी गुप्त राजकुमारी ब्याही थी। इसी दम्पति के पौत्र सम्राट ईशान वमन थे। हर्षगुप्ता गौड़ गुप्त नरेश तृतीय कुमार गुप्त के पिता जीवित गुप्त की फूफी थीं। मौखरि तथा गौड़ गुप्तों का इतना वर्णन करके अब मागध गुप्तों का कथन फिर से उठाते हैं।

सन् ५ से ५१ तक किसी समय गुप्त वंश में विश्लेषण होकर मागध और गौड़ शाखायें स्थापित हो जाने से यह साम्राज्य बलहीन हो गया। मागधगुप्त रहे तो सम्राट किन्तु हूणों को भारत में प्रवेश का यह अच्छा अवसर मिल गया। उनका नेता तोरमाण (त्वरमाण) ५१ में एरकिण वर्तमान एरण पर मालवे में गुप्तों से लड़ा। इस युद्ध में गुप्त सेनापति गोपराज मारा गया और ग्वालियर पर्यन्त भारत में हूणों का अधिकार हो गया। उन्होंने अपनी राजधानी सागल सियालकोट

म रखकर वहीं से विजित देश पर शासन चलाया। हूणों ने केवल भारत पर ही धावा न किया वरन् पाश्चात्य एशिया तथा योरोप पर भी अपना साम्राज्य फैलाया। इनमें शारीरिक शक्ति बहुत थी और कोई साधारण भारतीय या योरोपीय सैनिक एक हूण से लड़ नहीं सकता था। दाढ़ी या मूछ न होने से इनके शरीरों पर न तो जवानी का रोब आता था और न वृद्धता का महत्व। इनकी क्रूरताओं के विवरण योरोपीय ग्रन्थों में बहुत विस्तार से मिलते हैं यहां तक कि गत महायुद्ध में क्रूरता के लिये निन्दा करने में लोग जर्मनों को हूण कहते थे। जैसी असह्य क्रूरतायें इनकी वहां कथित हैं वैसी ही भारत में भी हुई होंगी क्योंकि योरोप तथा भारत में आने वाली दोनों हूण धारायें थीं मूलतः एक ही। सिवा सम्राट स्कन्दगुप्त के उस काल तक ऐसा कोई पराक्रमी सारे योरोप या एशिया में न हुवा जो हूणों को पराजित करता। ५१ में गोपराज की स्त्री अपने पति के शव के साथ सती हो गई और इस घटना के स्मरणार्थ सम्राट् बालादित्य द्वितीय ने ऐरकिण पर एक स्तूप बनवाकर उसमें लेख छोड़ा जिससे बहुतेरी तत्कालीन घटनायें ज्ञात हुई हैं।

५१ के थोड़े ही दिन पीछे (प्रायः ५११ में) तोरमाण का दूसरा धावा मालवे पर हुवा। उस काल मागध सम्राट् बालादित्य वहां थे। स्कन्दगुप्त के समय हूण दल तीन लाख था और केवल दो लाख भारतीय दल ने आक्रमण करके उसे हराया था। यह कथन कंग्यूर में सुरक्षित चन्द्रगर्भ परिपृच्छा के आधार पर श्रीयुत काशीप्रसाद जायसवाल ने अपने ग्रन्थ इम्पीरियल हिस्ट्री आव इंडिया के पृष्ठ ३६ पर किया है। यह ग्रन्थ आठवीं शताब्दी के प्राचीन बौद्ध ग्रन्थ मंजुश्रीमूलकल्प की टीका है। मञ्जु श्री की गेरहवीं शताब्दी की प्रति से यह ग्रन्थ तिब्बती

भाषा में अनुवादित हुआ। प्राप्त प्रति बहुत थोड़े अंतर के साथ तिब्बती अनुवाद से मिल जाती है। इस नाटक के बहुतेरे कथन इसी मञ्जुश्रीमूलकल्प के आधार पर किये गये हैं। स्कन्दगुप्त के समय जब हूण सेना तीन लाख थी तब बालादित्य के समय हमने अनुमान से उसे ढाई लाख माना है। सम्राट बालादित्य इस महती हूण सेना से युद्ध करने से कल्याण की आशा न रखकर भविष्य में प्रयत्न करने के विचार से मालवा और मगध को छोड़कर बंगाल चले गये। ५१ में उनका पुत्र प्रकटादित्य १७ साल का था और उन्हीं की आज्ञा से गोपराज ने उसे बन्दी किया था। तोरमाण मगध पर्यन्त भारत पर अधिकार करके वाराणसी पहुँचा। भागवतपुर में उसे प्रकटादित्य मिला। कहते हैं वज्रगुप्त या तो प्रकटादित्य ही का नाम था या इस नाम का उसका कोई भाई हो। नाटक में यह नाम प्रकटादित्य का ही माना गया है। तोरमाण ने वज्रगुप्त को प्रकटादित्य की उपाधि देकर अपने अधीन मगध का महाराज बनाया तथा उसके द्वारा बालादित्य के जीतने का प्रयत्न किया। इसी साल तोरमाण वाराणसी में मर गया और उसका पुत्र मिहिरकुल ५११ से ५२६ तक उत्तरी भारत का सम्राट रहा। प्रकटादित्य के प्रयत्नों का कोई फल न निकला और एक सन्धि द्वारा बालादित्य को हूणों ने बंगाल का करद भूपाल माना।

गुप्त सम्राट की दैन्यपूर्ण दशा से अथच मत विरोध के कारण मध्य भारत में हिन्दुओं ने भारतीय स्वतंत्रता का प्रयास आरंभ किया कान्यकुब्ज नरेश ईशानवर्मन इसके (मुखर) नेता हुये। इसी से उनका वंश मौखरि कहलाया। मौखरि नाम बी सी में भी मिलता है। यह पता पन्ना की मिट्टी की एक मोहर से चला है। धर्मदोष नामक एक हिन्दू क्षत्रप बालादित्य की ओर से मालवा पर्यन्त मध्य तथा पश्चिमी भारत का शासक

था। उसने स्वभावश हिन्दू पुनरुत्थान में योग दिया। किन्हीं अप्रकट कारणों से स्थाणवीश्वर (थानेश्वर) के वैश्य महाशय विष्णु वर्द्धन यशोधर्मन इस प्रयत्न के नेता हुये। यद्यपि वे थानेश्वर (पंजाब) के थे तथापि प्राय मालवा के कहे गये हैं। ज्ञात पड़ता है कि धर्मद्रोष के कारण इस हिन्दु प्रयत्न का पहला प्रभाव मालवे में ही पड़कर वह प्रान्त हूणों से स्वतन्त्र हो गया। शत्रुओं की कुछ गिरी दशा देखकर बंगाल में बालादित्य ने कर देने से इनकार कर दिया। मिहिरकुल उन्हें जीतने ससैन बंगाल पहुँचा किन्तु उनके युद्ध कौशल से उस बेजाने हुये जलपूर्ण प्रान्त में उसकी सेना घिरकर परवश हो गई। मिहिरकुल स्वयं बन्दी हुआ। इस अपमान से लज्जित होकर उसने बाला दित्य को अपना मुख न दिखलाया। सन्धि द्वारा उसका राज्य केवल सागलप्रान्त में रह गया और शेष मध्य पाश्चात्य और उत्तरी भारत के सम्राट् बालादित्य माने गये। यह घटना सन् ५२७ की है। इस विजय के उपलक्ष में उन्होंने नालन्द में बड़ा (विशाल) बौद्ध मन्दिर विजय स्तूप की भांति ५२७ से ५२९ तक बनवाया और उसमें स्मरणार्थ एक लेख भी लिखवाया। इस प्रकार ५१ और ५२९ वाले दो लेख इनके हैं जिनसे उपर्युक्त घटनायें ज्ञात हुई हैं। चीनी यात्री युवानच्वांग भी केवल इन्हीं का हूण विजेता कहता है। ५३ में इतिहास द्वारा अज्ञात कारणों से आप साम्राज्य छोड़ बौद्ध भिक्षु हो गये और प्रकटा दित्य उत्तराधिकारी हुये। वे हूणाश्रित होने के कारण कभी पिता के आश्रित हुये या नहीं और किस प्रकार से सम्राट बने सो इतिहास में अकथित है।

उधर ५३२ के दो स्तूप मंडोसर तथा एक अन्य मध्य भारतीय स्थान पर, यशोधर्मन के मिलते हैं जिनमें वही हूण विजेता कहा गया है अथच बालादित्य का इस विजय से कोई सरोकार नहीं

बतलाया गया है। इनमें एक विष्णुवर्द्धन के नाम से है और दूसरा यशाधर्मन के। पहला उनका नाम था और दूसरी उपाधि। उनमें यह कथन आता है कि उस काल मिहिरकुल कश्मीर भर में शासक था अथच वि णुवर्द्धन राजाधिराज परमेश्वर की उपाधि के साथ मालवा दक्षिण मगध बगाल आसाम और काश्मीर पर्यन्त उत्तर का स्वामी था। वह इस प्रकार प्राची उत्तर और दक्षिण का सम्राट था। समझ पड़ता है कि प्रकटादि य इसका करद महराज हो गया था सो उसके प्रा त मगध आसाम और बगाल यशोधमन की राज्य के अ तर्गत कहे गये हैं। काश्मीर में मिहिरकुल शासक अवश्य था कि तु वह भी शायद अ ग्रीन हो गया था जिससे वि णुवर्द्धन यशाधमन के रा य म कश्मीर भी माना गया। यह दोनों लेख धमदोष के भाई दक्ष द्वारा बने। इनमें विष्णुवर्द्धन आ मवशी कहे गये हैं। इधर मौखरि नरेशों के दो लेख अप्सड (सन् ५ ५) तथा जौनपुर (सन् ६११) के मिले हैं जिनके अनुसार ईशानवर्मन ने मौखरि सेना लेकर हूणों को हराया दामोदर गुप्त को मारा तथा गौड़ेश कुमारगुप्त तृतीय से पराजय पाई। अ सड वाले लेख के अनुसार शववमन के समय सोनभद्र पय त दश मौखरि सम्राट के अधिकार में था तथा शेष मगध और बगाल इनके अधीनस्थ गुप्तों के। जौनपुर का लेख कहता है कि पश्चिम में काठियावाड तथा दक्षिण में आन्ध्र पय त भारत मौखरियों का था। बालादि य से हारकर जब ५२७ में मिहिरकुल सागल पहुँचा तब उसने अपने भाइ को शासक एव युद्धोन्मुख पाया। इस दैन्यावस्था में उस काल क कश्मीर नरेश ने उसे एक छोटा सा रा य दे दिया ५३३ के पूव मिहिरकुल अपने उपकारी से पूरा कश्मीर प्रा त छीनकर वहाँ का शासक हो गया। इसके भाई वाला सागल रा य भी ५३३ के पूव नष्ट हो चुका था। हषवद्धन के पीछे गौड गुप्तों ने प्रायः ६६ से ७२ तक

अधिकार भोगा। इनकी शाखा इस प्रकार थी—माधव गुप्त आदित्यसेन देवसेन विष्णुगुप्त द्वादशादि य (भाई) जीवितगुप्त। विष्णुगुप्त को च द्रादि य भी कहते थे। इन सब नरेशों में आदि य सेन सर्वो कृष्ट थे। आपने उत्तरी भारत में सम्राट् पद पाया तीन अश्वमेध किये तथा दाक्षिणात्य चोलनरेश को पराजित किया। इनका समय ६ से ५ तक माना जा सकता है। इनके उत्तराधिकारी देवसेन का समय इस प्रकार जाना गया है कि उनका या आदित्यसेन का व ज ६७९ से ६९६ तक रा य करने वाले चालुक्य नरेश विनयादित्य ने किया। इस वंश का पूर्ण अ त ७४५ से ७७२ तक रा य करने वाले पाल नरेश गोपाल ने किसी समय किया। उधर प्रक टादित्य ५१ में १७ वर्ष के थे और ९४ वर्ष की अवस्था में उनका शरीरान्त लिखा है। अतएव उनके ज म और मृ यु काल ४९३ तथा ५ ७ थे। इ होंने शत्रुओं से युद्ध करने के स्थान में उनसे दबकर रहना कल्याणकर समझा। फल इसका यह हुआ कि यह स्वयं तो मरण पर्यन्त सुख से रहे किन्तु रा य ऐसा गिरा कि उत्तराधिकारी के लिये कुछ नहीं न गया। ५९ से ६ ७ पर्यन्त शशांक नामक एक ब्राह्मण हि दू ने बंगाल में रा य किया। अन तर ७२ से ७४५ पर्य त राजभद्र नामक एक शूद्र शासक जनता द्वारा निर्वाचित होकर बंगाल का सुदृढ़ नरेश रहा। इसके पीछे इसी साल दूसरा शूद्र भूपति गोपाल निर्वाचित हुआ जिसका पाल वंश ७४५ से ११९५ तक बंगाल का रा य चलाता रहा। मौखरियों गौड़गुप्तों तथा हर्षवर्द्धन यशोधर्मन के वंश वृक्ष आगे दिये जावेंगे।

अब हम अपने नाटकीय समय पर फिर से आते हैं। ऊपर के कथनों से प्रकट है कि ५३३ में विष्णुवर्द्धन सम्राट् थे। उन्होंने यह पद कब तक भोगा सो अज्ञात है कि तु ५४ तक उनका सम्राट रहना अनुमान किया जाता है। मञ्जुश्रीमूलक प में इनके पुत्र

हरवर्द्धन भी सम्राट लिखे हैं। उनका राज्य कब क्योंकर गया सो पता नहीं किंतु प्राय ४५४ से ५५ तक कुमारगुप्त (तीसरे) सम्राट थे और ५५ से ५५४ तक ईशान वर्मन। इन्हीं दृढ घटनाओं पर उस काल का इतिहास अनुमान से कहा गया है। उपर्युक्त कथन प्राय सब के सब जायसवाल महाशय कृत मञ्जुश्रीमूलक प की टीका में हैं। ऊषावदात शक के समय में सूद का दर आठ आने सैकड़ा मासिक लिखी है। बौद्धों के विषय में जो विचार कहे गये हैं वे प्राय सब मंजुश्रीमूलक प में वर्तमान हैं। हमारे नाटकीय पात्रों में से ईशानवर्मन बालादित्य धर्मघोष तोरमाण वज्रगुप्त (प्रकटादित्य) शर्ववर्मन दत्त विष्णुवर्द्धन हरवर्द्धन नरवर्द्धन मिहिरकुल कमारगुप्त दामोदरगुप्त और महासेनगुप्त ऐतिहासिक पुरुष हैं और शेष अनुमान द्वारा कल्पित। कथानक में इतिहास द्वारा समर्थित जितना अंश है वह ऊपर के विवरण में आ गया है। शेष कथन अनुमान तथा कल्पना द्वारा किये गये हैं। शर्ववर्मन के पीछे अवन्तिवर्मन सम्राट हुए ही थे। धर्मदोष मालवा के क्षत्रप होने से अवन्ति में रहते होंगे अथवा वहाँ से सम्बद्ध थे। ईशानवर्मन के ये दृढ़ मित्र थे ही सो अवन्तिवर्मन का उन्हीं का दौहित्र होना अनुमान में आता है। हूणों का हिन्दुओं में मिल जाना प्रकट ही है। इसी प्रकार सीथियनों शकों और कुशनों का हाल है।

इस नाटक में यत्र तत्र ऐतिहासिक घटनाओं के कथन बहुतायत से आये हैं। अतएव थोड़े में इससे सम्बद्ध प्राचीन भारतीय इतिहास का दिग्दर्शन करा देना उचित होगा। भारत का प्राचीनतम इतिहास मोहनजोदड़ो और हड़प्पा से उपलब्ध है। सर जान मार्शल ने इसका समय ३२५ से २७५ बी सी (ईसापूर्व) तक किसी काल होना बतलाया है। इधर लखनऊ विश्वविद्यालय के इतिहासज्ञ श्रीयुत डाक्टर राधाकुमुद मुकुर्जी

यह समय ४ बी सी के लगभग बतलाते हैं। इसकाल भारत में ध्य की उन्नति हो चुकी थी। योनिलिंग की पाषाण मूर्तियाँ भी मिली हैं जो शिव पार्वती के पूजन से सम्बद्ध हैं। शिव पशुपति तब भी थे। उनके निकट चार पशु पाये जाते हैं। वे ध्यानमुद्रा में भी दिखलाये गये हैं। शक्ति का विचार मातृपूजन के रूप में भी पाया जाता है। शहर अच्छे प्रकार से बना था। स्नान का प्रबंध अच्छा और बहुतायत से था। मकान पक्के थे। मनुष्य ६१ इंच से ६७ इंच तक ऊंचे थे। अनंतर वैदिक समय आता है। भारत में आर्यागमन २५ बी सी के निकट समझा जाता है। वैदिक साहित्य २ से १६ बी सी तक बनने लगा था। ऋग्वेद की नई से नई ऋचायें उन चार ऋषियों की हैं जो अर्जुन द्वारा खांडवदाह से सुरक्षित हुये थे। उनके नाम थे जरितर द्रोण सारीसृक्र और स्तम्ब मित्र अन्य तीनों वेद और भी पीछे तक बनते रहे। ऋग्वेद में ३३ मुख्य देवताओं के पूजन यज्ञों में होते थे। तत्कालीन समाज और उन्नति का उत्कृष्ट वर्णन वैदिक साहित्य और पुराणों में मिलता है। ऋग्वेद के पीछे याज्ञिक विधान की वृद्धि यजुर्वेद तथा ब्राह्मण ग्रन्थों में हुई। भक्ति की वृद्धि सामवेद ने की। अनंतर क्षत्रियों के प्रभाव से ज्ञान काण्ड बढ़ा जिससे उपनिषदों और आरण्यकों द्वारा निर्गुण ब्रह्म के विचार दृढ़ हुये। अनन्तर महर्षि कपिल और जैमिन ने यह सोचा होगा कि जो ईश्वर अपने से कोई विशिष्ट सम्बंध नहीं रखता उसका अस्तित्व ही वृथा है। इस प्रकार भारत में ईश्वरत्व गिरा जिसके साथ प्राचीन शैव ईश्वरत्व भी गिर गया। महात्मा गौतम बुद्ध ने अपने मत में ईश्वर को स्थान न देकर आचार पर जोर लगाया तथा बुद्ध धर्म और संघ को तुरत्न मानकर लोकमत को पहले पहल ऊंचा स्थान दिया।

यह देखकर महर्षि बादरायण व्यास ने श्रीभगवद्गीता में कर्मवाद का मान करके निगुणवाद को मानते हुए भी अधिक लोकमान्य सगुणवाद को चलाया। इन्ही के साथ अवतारवाद भी चला। भारत में बौद्धमत के प्रचार से समाज में बड़ी खलबली मची। उधर ग्रीकों ने भी उन्नति करके ३२६ से ३२३ बी सी पर्यन्त सिकन्दर द्वारा पंजाब पर आक्रमण किया। विदेशियों ने सब से पहल वशिष्ठ के प्रोत्साहन से सूर्यवंशी सेना में भर्ती होकर कान्यकुब्ज नरेश विश्वामित्र को हराया था। अनन्तर तालजंघ से मेल करके उन्होंने उत्तरी भारत का शासक होने में हैहय वंश को सहायता दी थी। इस बार (युद्ध समूह) में कई भारतीय राज्य टूटे थे। वाराणसीपति प्रतर्दन तथा सूर्यवंशी सगर ने इस मेले को और हैहय प्रयत्न को ध्वस्त किया था। इसके पीछे विदेशियों का सब से पहला आक्रमण सिकन्दर का ही हुआ। उसने पंजाब तो जीता किन्तु महापद्मनन्द की सेना से युद्ध करने की हिम्मत ग्रीक दल ने छोड़ दी। सिकन्दर ने अपने जीत हुए प्रान्त पर अधिकार रखना चाहा किन्तु चाणक्य और चन्द्रगुप्त के प्रयत्नों से ग्रीक लोग पराजित हुए और भारत में ३२३ से १ ५ बी सी पर्यन्त जग प्रसिद्ध मौर्य साम्राज्य स्थापित हुआ। चाणक्य अशोक (२७४–२२ बी सी) के आन्तिम काल पर्यन्त अमात्य रहे। अनन्तर अशोक के बौद्धमत ग्रहण से यह साम्राज्य बलहीन होकर टूटने को हुआ। पंजाब में इन्हीं दिनों दो ग्रीक राज्यों की नींव पड़ी। ये लोग मौर्य काल में भी अफगानिस्तान तथा फारस में शासक थे ही सो भारतीय बलहीनता देखकर पंजाब में भी स्थापित हो गये। अनन्तर डेमिट्रियस नामक ग्रीक ने मगध पर भी आक्रमण किया और अन्तिम मौर्य नरेश कादर बृहद्रथ पुष्यमित्र सेनापति द्वारा बहुत कुछ समझाने बुझाने पर भी युद्धार्थ सन्नद्ध न हुआ। तब सेना का निरीक्षण कराते हुए ही कदर्य से

क्रोधा न होकर पुष्यमित्र ने उसका वध ही कर डाला और ४ वर्षों तक अपने को केवल सेनापति कहकर ग्रीकों (मीडियनों) से युद्ध किया। कलिंग नरेश खारवेल भी इस काल बड़ा प्रतापी था। इन दोनों के प्रयत्नों से मीडियन पराजित हुए और देश बचा। शुंगों का साम्रा"य ११२ वर्ष चला और तब काण्वों का ४५ वष पर्य"त रहा। इनके समय में भी शुंग स्थानीय शासक रहे। काण्व बलहीन थे। अन तर आन्ध्रों का राज्य "दिशा स फैल कर उत्तरी भारत में भी साम्राज्य के रूप में स्थापित हुआ। प्रायः दूसरी शताब्दी बी सी से शक लोग मध्य एशिया आदि से हूणों द्वारा निर्वासित होकर भारत में घुसने लगे। अशोक द्वारा मगध और पाश्चात्य एशिया में भारतीय सभ्यता और धर्म फैले थे। कुछ सीदियन नरेश भी बौद्ध हो गये थे। शकों ने दोनों पजाबी सीदियन राज्य ध्वस्त कर दिये। ये मथुरा और अवन्ती पर्यन्त भारत में फैले। सन् ५७ बी सी में विक्रमादित्य ने अवन्ती में इ"हें हराकर शकारि की उपाधि प्राप्त की कि"तु थोड़े ही दिनों में शकों का प्रभु"व फिर बढ़ा। ये विक्रमादि"य कौन थे सो अभी तक अनिश्चि"त है। लोग इन्हें प्रमार कहते हैं कि तु उस काल कोई प्रमार विक्रम का अव ती में होना इतिहास अभी तक सिद्ध नहीं कर सकता है तथा भर्तृहरि के भाइ शकारि विक्रम का अस्ति"व बहुत करके मौखिक कथाओं द्वारा ही समर्थित है। जायसवाल महाशय ने अपने इतिहास में एक आन्ध्रनरेश को विक्रमादित्य होना बतलाया है। शकों की दीर्घकाल न महत्ता काठियावाड़ और गुजरात की ओर पाइ जाती है। गुजराती शक रा"य को ३ २ में च"द्रगुप्त विक्रमादित्य ने नष्ट किया। इसके पीछे भारतीयों में शक नाम न रहा अथच ये लोग गुण कर्मानुसार शेष भारतीयों के चातुर्वर्ण्य में मिल गये। शकों की एक शाखा युधिशि या कुशान भी कहलाती

थी। कुशानों में प्रथम और द्वितीय कडफाइजेज के राज्य कुछ वर्ष पहले रहे और सन् ७ से मुख्य कुशान सम्राट् कनिष्क का शासनकाल चलता है। आप बौद्ध हो गये और आपही के प्रयत्नों से यह मत महाचीन में फैला। इनके पुत्र हुविष्क और पौत्र वासुदेव भी सम्राट् थे। अंतिम महाशय हिंदू समझ पड़ते हैं। जायसवाल महाशय के अनुसार कुशान साम्राज्य को सन् २२६—४१ में भारतीय वीरसेन नाग ने ध्वस्त किया। नागों का भारशिव साम्राज्य प्राय वर्ष ही चला और तब अंतिम नाग नरेश का दौहित्र एक वाकाटक नरेश सम्राट् हुआ। वाकाटकों की राजधानी बुंदेलखंड में जसो के निकट थी। इनमें प्रवरसेन मुख्य सम्राट् थे।।वाकाटक और पल्लव द्रोणाचार्य के पुत्र अश्वत्थामा के वंशधर कहे जाते हैं। ये लोग पहले ब्राह्मण थे किंतु पीछे क्षत्रिय हो गये। इन्हीं के पीछे गुप्त साम्राज्य भारत में स्थापित हुआ।

सबसे पहले घटोत्कच गुप्त कुछ प्रभावशाली हुये। ये महाशय माथुर जाट कहे जाते हैं। अपने इतिहास में जायसवाल महाशय ने कई कारण देकर इनका जाट होना लिखा है। पीछे से मंजुश्री मूलकल्प में ये साफ साफ जाट कहे गये हैं। महाराजा घटोत्कच के पुत्र प्रथम चन्द्रगुप्त का विवाह एक लिच्छवि राजकुमारी से हुआ। तभी से इस वंश का प्रभाव बढ़ा। लिच्छवि लोग मूल रूप में क्षत्रिय लिखे हैं और अन्य प्रमाणों से भी क्षत्रिय थे। प्रथम चन्द्रगुप्त का राजत्वकाल सन् ३२ से प्राय ३३५ तक माना जाता है। मगध में अपना प्रभाव बढ़ाने के प्रयत्न में चन्द्रगुप्त पहले तो कृतकार्य हुये किन्तु अन्त में इन्हें निर्वासित होकर गंगाजी के इस पार अवध प्रान्त में आना पड़ा। मरने के समय चन्द्रगुप्त ने अपनी लिच्छवि रानी से उत्पन्न पुत्र समुद्रगुप्त को उत्तराधिकारी बनाया यद्यपि ये ज्येष्ठपुत्र न थे। इस आज्ञा का समुद्रगुप्त का समर कौशल मुख्य कारण होगा किन्तु

लिच्छवि मातृत्व से भी इनकी प्रभावबृद्धि समझ पड़ती है। समुद्रगुप्त ने युद्ध में वाकाटक नरेश रुद्रसेन का बध किया एवं पल्लवराज विष्णुगोप तथा इतर बहुतेरे नरेशों को पराजय देकर साम्राज्यपद ग्रहण किया। इनका राजत्व काल ३३५ से ३७५ तक माना गया है। आप वीणा वाद्य में निपुण थे तथा अन्य अनेकानेक सद्गुण भी रखते थे। आपका अश्वमेध प्रख्यात है। उस घोड़े की पाषाण मूर्ति अब तक लखनऊ के अजायबघर में प्रस्तुत है। इनका शरीरान्त प्रायः ३७५ में हुआ और पुत्र चन्द्रगुप्त विक्रमादित्य सम्राट् हुए। प्रसिद्ध कवि कालिदास इन्हीं विक्रम के राजकवि थे। ३ ८ से ४ १ पर्यन्त युद्ध करके गुप्तों के लिये आपने मालवा सौराष्ट्र काठियवाड़ और गुजरात प्रान्त प्राप्त किये। गुप्त संवत् ३ ३ से चलता है। सम्भवतः इसी समय आपने कोई प्रान्त जीता हो। इनका शरीरान्त ४१३ ई॰ में समझा जाता है। चीनी यात्री फाहियेन ४ ५ से ४११ तक भारत में रहा। उसने जो भारतीय गौरवपूर्ण विवरण लिखा है वह इन्हीं सम्राट के समय का है। इनके पीछे प्रथम कुमारगुप्त का राजत्वकाल ४१३ से ४५५ तक रहा। आपके समय में गुप्तों की पुष्यमित्र नाम्नी गण शासिका जाति से मुठभेड़ हो पड़ी। गुप्तों की एक करारी पराजय हो गई और यह राजघराना टूटने को अब तब करने लगा। अन्त में बड़े प्रयत्न से सम्राट् ने पुष्यमित्रों को पराजित किया। सन् ४५५ में हूणों का प्रसिद्ध भारतीय आक्रमण हुआ। उन्होंने पहले कुशान और सासानी बादशाहों को हराया और तब इन तीनों ने मिलकर तीन लाख सेना के साथ भारत पर धावा किया। सम्राट का १ वर्ष की अवस्था वाला पुत्र स्कन्द गुप्त अपनी इच्छा से दो लक्ष गुप्त दल का सेनापति बना। इस राजकुमार ने बड़ी हिम्मत के साथ इस परमोत्कृष्ट भारतीय दल से ड्योढ़ी शत्रु सेना पर आक्रमण करके उसे पूर्ण पराजय दे दी।

इसी विजय के उपलक्ष में सम्राट कुमारगुप्त ने गद्दी छोड़कर परवश स्कन्दगुप्त को सम्राट् बना लिया । हूणों से युद्ध फिर भी बारहवर्ष और हुआ । अन्त में उपर्युक्त तीनों बादशाहों का वध करके सम्राट् स्कन्दगुप्त ने हूण आक्रमण से भारत का छुटकारा किया । ४६७ में ही वे स्वर्गवासी भी हुए । सम्राट समुद्रगुप्त के समय से स्कन्दगुप्त के काल तक भारत में सत्ययुग सा रहा । यहाँ इतनी सुव्यवस्थित शासनप्रणाली और किसी समय नहीं रही । कुछ ऐतिहासिकों का विचार है कि हूण बल से अन्त में स्कन्दगुप्त की हार हो गई किन्तु जायसवाल महाशय ने मञ्जुश्रीमूलकल्प की टीका में दृढ़ आधारों से प्रमाणित किया है कि ५१ के पूर्व हूण शासन भारत में नहीं स्थापित हुआ ।

इन कारणों को थोड़े में यहाँ भी लिखते हैं । गुप्त संवत् २८१ (सन् ६०) वाले सारनाथ के लेख से दो बालादित्य सम्राटों का इस वंश में होना सिद्ध है । स्कन्द के पीछे बहुत थोड़े काल के लिये पुरगुप्त सम्राट् हुए । इनके उत्तराधिकारी बालादित्य प्रथम के विषय में चन्द्रगर्भ सूत्र और मंजुश्रीमूलकल्प में आया है कि उन्होंने निःसपत्नमकण्टकम् राज्य भोगा । नालन्द के लेख से प्रकट है कि आपही वह पहले गुप्त सम्राट् थे जो बौद्ध हुए । इनका शरीरान्त ३६ वर्ष की ही अवस्था में हुआ । म मू कल्प कहता है कि आप कई जन्मों तक चक्रवर्ति रहेंगे । इन दोनों प्रमाणों से इनका राज्य अच्छुण्ण बैठता है । इनके पीछे कुमारगुप्त दूसरे ४७३ से ४७६ तक सम्राट हुए । लिखा है कि ये धमवान थे और इनके राज्य में गौड (उत्तरी बंगाल) की उन्नति हुई । अनन्तर बुधगुप्त सम्राट् हुए । म मू क प कहता है कि इस सम्राट् के पीछे ही गृह विश्लेषण द्वारा गुप्त साम्राज्य टूटा । बुध गुप्त प्रकाशादित्य का समय ४७ से ५ तक माना जाता है । इनके दीनाजपुर वाले ताम्रपत्रों और सारनाथ के लेख

से प्रकट है कि इनका राज्य बगाल से मालवा तक फैला हुआ था। अनन्तर जब गृह विश्लेषण द्वारा गौड गुप्त प्रबल हो गये तब तोरमाण ने ५१ में आक्रमण कर दिया। इसके आगे का इतिहास ऊपर दिया जा चुका है।

नाटक में जिन विचारों से जगन्नाथ कथित हैं उनके अनुसार कुछ पात्रों की अवस्थाओं का विवरण यहाँ दिया जाता है जिससे कि नाटकीय कथानक के भाव पाठकों को भली भाँति ज्ञात रहें। यह सिद्ध है कि स॰ ५१ में प्रकटादित्य १७ वर्ष के थे। अतएव उनका जन्मकाल ४६३ आता है। इस आधार पर उनके पिता बालादित्य का जन्मकाल ४७ हो सकता है। ५३ में वे बौद्ध भिक्षु हुये। शर्ववर्मन का जन्मकाल ४८ माना गया है और मृत्यु का ५१२ ईसवी। इस प्रकार शर्व के पिता ईशान वर्मन का जन्मकाल ४ ३ हो सकता है। हर्षगुप्ता हर्षगुप्त की कन्या थीं। इन का मागध गुप्तों से सम्बन्ध अज्ञात है किन्तु ये तथागत गुप्त के पितामह के भाई माने गये हैं। ईशानवर्मन और जनक्षेत्र की भारतोद्धार सम्बन्धिनी प्रथम मन्त्रणा ५० की समझी गई है जबकि ईशान ३७ वर्ष के माने गये हैं। इस प्रकार सम्राट् होने के समय उनकी आयु ७ वर्षों की पड़ती है। अवन्तिवर्मन का जन्मकाल ५३४ माना गया है। उनका शरीरान्त प्रायः ६ में हुआ जबकि उनकी आयु ६६ वर्षों की आती है। उपर्युक्त समयों में से माने हुओं का कोई ऐतिहासिक आधार नहीं है। ये बातें अनुमान और कल्पना से केवल विषय समझाने को लिखी गई हैं। नाटक में जहाँ कहीं संवत् लिखा है वहाँ गुप्ताब्द से प्रयोजन है क्योंकि उस काल वही चलता था। उसमें ३१९ जोड़ने से ईसवी सन् तथा ४४ जोड़ने से विक्रमीय संवत् बनता है।

ऐतिहासिक ग्रन्थों के आधार पर गौड गुप्तों मौखरियों तथा हर्षवर्द्धन के वंशवृक्ष नीचे लिखे जाते हैं।

वंश चक्र

कृष्णगुप्त — हरिवम मार्का

- कृष्णगुप्त
  - हर्षगुप्त
    - जीवितगुप्त
      - कुमारगुप्त (३)
        - दामोदर गुप्त
          - हासेन गुप्त
          - महा न गुप्त
  - हषगुप्त — आ दि य वम
    - ईश्वर वमन
      - ईशानवमन ५५४ ई
        - न्यवम
          - पुष्यभूति
            - ज्यवद्ध न (१) — अवन्ति म
              - आदित्यवद्ध न — मह वमन
                - प्रभा द्ध
        - सवमन
          - अवन्ति म
            - ग्रहवमन

देवगुप्त २ कुमारगुप्त माधवगुप्त=श्राम िदेव

आदित्यसेन=कोणदेवी

- पुत्री — भोगवम ैखरि
  - देवी
    - यदेव चक्र काम=राज्यम । हष द की पुत्री ७५९ ई
- देवगुप्त (३) — कमलादेवी
  - विष्णगुप्त= ज्जादेवी
    - ज वितगुप्त (२

प्रभा द्ध की संतान:

राज्यवद्ध न ( ) हष न — यश्री — ग्रहवमन ौ रि कृष्ण

 ि=प्र न (२) व मा

यशोधर्मन विष्णुवर्द्धन के पुत्र हरवर्द्धन थे तथा मूल क प मंजु श्री के अनुसार इसी वश में नर वर्द्धन हुये जो हरवर्द्धन और आदित्य वर्द्धन के बीच में थे। सम्भवत नर वर्द्धन हरवर्द्धन के पुत्र थे और उन्हीं का उपनाम रा यवर्द्धन था। अथच हरवर्द्धन का उपनाम पुण्यभूति भी था। हर्ष वर्द्धन विष्णुवर्द्धन के वशधर इतिहासों में कहे गये हैं।

लखनऊ }
सं १९९२ }

"मिश्र ब धु"

नाटकीय पात्र

१—ईशान धर्मन का यकुब्ज नरेश अन्त में भारत का सम्राट।
२— बालादित्य मागधगुप्त सम्राट्।
३—धर्मदेव बालादित्य का म त्री।
४—वीरसेन सेनापति बालादि य का प्रकटादित्य का और कुमारगुप्त का एक दूसरे के पीछे।
५—धर्मदोष क्षत्रप बालादित्य का विष्णुवर्द्धन का और अ त में ईशान धर्मन का। ई व का पक्का मित्र।
६—तोरमाण हूण सम्राट्।
७—वज्रगुप्त प्रकटादित्य बालादित्य का पुत्र कुछ दिन हूणों का दासी फिर मागध सम्राट और अ त में मागध महाराज।
८—शववमन ईशानवर्मन का पुत्र और युवराज।
९—कविराज ह व के यहां विष्णुवर्द्धन के यहां और मिहिर कुल के यहां।
१ —दत्त शास्त्रज्ञ धर्मदोष का भाई अन्त में कश्मीर का क्षत्रप ईशानवर्मन की ओर से।
११—सुभद्र शववर्मन का मित्र इन्दु की सखी से विवाह करने वाला।
१२—योगिनी सुभद्र तथा प्रकटादि य से भविष्य भाषण करने वाली।
१३—रा कु इन्दु धर्मदोष की कन्या शववर्मन की रानी।
१४—सखी इ दु की सुभद्र को याही गई।
१५—विष्णुवर्द्धन जग सेठ अ त में सम्राट ईशानवर्मन का मित्र।
१६— हरवर्द्धन सम्राट अन्त में जगत्सेठ। स्वय सम्राट का पद छोड़ा।

१७—राजमाता विष्णुवर्द्धन की स्त्री हरवर्द्धन की माता।

१८—साम्राज्ञी हरवर्द्धन की स्त्री।

१९—मिहिरकुल न ६ का पुत्र हूण सम्राट।

२ —शेरशिकन न १९ का मंत्री व सखा।

२१—कुमारगु त तृतीय गौड महाराजा अ त में भारत सम्राट
अग्नि में स्वरुचि से आ म दहन।

२२—दामोदरगुप्त नं २१ का युवराज पुत्र न ८ द्वारा युद्ध में
मारा गया।

२३—महासेनगुप्त न २१ का अन्तिम युवराज अ त में गौड का
महाराज।

हूण चौधरी हूण तथा क्षत्रिय सिपाही बनिया धीवर
सेनापति उपसेनापति प्रतीहारी परिचारकगण आदि।

सूचीपत्र

प्रथम अंक

द्वितीय अंक

तृतीय अंक

ईशान वर्मन नाटक

शुद्धि पत्र

पृष्ठ	पंक्ति	अशुद्ध		शुद्ध	
५	१४	महुँचने		पहुँचने	
१	१	आरखिर		आखिर	
१	१३	पिता	गुप्त	पिता ने	तथाणत गुप्त
१२	६	चित्त		चित्त	
१४	१	सारा		का सारा	
१	२	प्रपौत		प्रपौत्र	
१९	२५	माहुर		मोहरे	
१९	२७	उन		उस	
२२	१६	आवै			न आवे
३४	१४	तये		लिये	
४२	१–२	न रह है		ले रहा है	
४३	१२	लगाव		लगा	
४७	१४	कोसल		कोमल	
४९	२४	दिखाते		दिलाते	
५३	२१	नालबन्ध		नालन्द	
५७	१	है		हैं	
६१	१६	अशाक		अशोक	
८	१३	अनन्त		अनन्त ।	
५	११	बिन्ध		निन्ध	
७३	२३	हवे		लेते	

पृष्ठ	पंक्ति	अशुद्ध	शुद्ध
७६	२४	ज्ञुगति	ज्ञुगुति
७८	२६	भ्रुप	भुप
७१	१	है।	है
२	१५	है	हैं
३		होगी	होंगी
४	१६	है	हैं
८	२५	समझ	समझें
९२	२२	पूप	भूप
९३	२	घबरात	घबरान
१ १	२	जानिवैन	जानिबैन
१ ३	२३	धार कार	धार
१ ६	१	किया	न किया
१ ६	१३	बल	कल
११	१७	गूण	चूर्ण
११३	२	की	को
११६	८	प्रभाव	प्रवाह
१२१	३	कमा	क्या
१२५	१७	भुवपाल करि	भुवपाल करि
१३४	१४	हाइ	हइ
१३	१२	मुख	मूर्छा
१५५	१५	चाचा य	चांचल्य
१५६	१८	आयोजन	प्रयोजन

प्रथम अंक

[स्थान मालवा]

प्रथम दृश्य

(सम्राट् भानुगुप्त बालादित्य दूसरे धर्मदोष तथा मन्त्री धर्मदेव का प्रवेश)

बाला०—यह बात तो मुझे कुछ जँचती नहीं। काकाजी अच्छे शूर थे और लालच में पड़ गये; पितृचरण से दृष्टान्त में पड़कर कुछ करते न बना। बस इतनी ही बात थी।

धर्म द —वे कभी अपने कुटुम्बी सम्राट के प्रतिकूल खड़े न होते वरन् आज हूण दल से युद्ध करते हुए देख पड़ते। बात यह है कि उनसे हिन्दू धर्म की निष्ठा छोड़ी न गई न गो ब्राह्मण तथा देवताओं का मौखिक अपमान तक देखा गया।

ध दो —क्या आपका विचार यह है कि यदि इन बातों का प्रभाव उन पर न रहता तो विद्रोही सिपाहियों के नेता वे न बनते ?

धर्म दे —केवल इतना ही नहीं वरन् कट्टर हिन्दू विश्वासों वाले सिपाही स्वयं विद्रोही न होते और न तो यह बखेड़ा उठता न साम्राज्य चौपट होता। महाराजा ईशान वर्मन का भी यही कथन है।

बाला —वह तो मुझ से भी इसी प्रकार की बहुत बकबक करता रहा था। बात यह है ही कि बौद्धों के सामने गणना में हिन्दू चौगुने से भी अधिक होंगे। फिर भी जब जेठों की

बौद्ध महामत पर श्रद्धा बढ़ी तब क्या औरों के डर से अपने उच्च विचार छोड़ देत ?

धर्म दे —यह तो मेरा भी कथन है। स्वयं मैं महायानीय मत छोड़ने को तैयार नहीं हूँ किंतु गुप्तवंश को मत परिवर्तन का मूल्य साम्राज्य खोकर देना पड़ा है। यदि सम्राट बाला दित्य प्रथम यह महामत न ग्रहण करते तो आज हमारे ऊपर तोरमाण का यह भारी दबाव न पड़ता।

बाला —देखो परसाल ही बेचारा गोपराज मेरे लिये पेरकिण के युद्ध में प्राण दे चुका है और अभी से फिर सकट उपस्थित है।

धर्म दे —सोह तो बात है। परसाल तो हम लोग ऐसे निश्चिन्त रहे कि पेरकिण में उनकी सती स्त्री के लिये स्तूप तक बना। यह कौन जानता था कि इतनी जल्दी फिर आफत आवेगी ?

धर्म दे —अन्नदाता यदि यह धार्मिक परिवर्तन कुछ गुप्त रूप में रक्खा जाता तो कैसा होता ?

बाला —सम्राट होकर यदि इतरों से इतना भय खावे तो स्वामी भाव लुप्त होकर सेवकपन आ जावेगा।

धर्म दे —अब यह कठिनता कैसी उपस्थित है ?

बाला —आपकी समझ में शत्रुसेना कितनी है ?

धर्म देव—डेढ़ दो लाख से क्या कम होगी ? यहाँ अपने पास एक लाख तक नहीं है।

बाला —देखें वीरसेन के अग्रगामी दल पर कैसी बीतती है ?

धर्म दे —भगवान सब कृपा ही करेंगे।

(प्रतीहारी का प्रवेश)

प्रती —जै जै सम्राट ! स्वामिन् सेनापति जी बहुत ही घबड़ाये हुए बाहर प्रस्तुत हैं, दर्शन चाहते हैं।

धर्म दे —अभी भेजो। (प्रतीहारी का प्रस्थान वीरसेन सेनापति का प्रवेश)।

वीर से —बड़ा गजब हुआ अन्नदाता ! अभी सारी सेना सन्नद्ध कराता हूँ ; आज्ञा मिले।

बाला —उधर के दल से युद्ध में कैसी निबटी ?

वीर से —सम्राट् ! शत्रुदल संख्या में ढाइ लाख से कम न होगा। अपनी थोड़ी सी सेना उनके अग्रगामी दल के एक ही झपेटे में आ गइ। किसी प्रकार आधे पर्धे सैनिकों को बचाकर ला सका हूँ।

धर्म दो —तब फिर शेष दल सन्नद्ध करने के पूर्व कर्तव्य का निर्णय आवश्यक है न ?

वीर सेन—कतव्य है युद्ध ; और क्या शत्रुओं का मुह देखने को रोटी खाता हूँ ?

बाला —ढाइ लाख शत्रुसेना का सामना कर सकोगे ?

वीर सेन—नहीं कर सकगा ता प्राण देने में तो सन्देह न होगा।

बाला —प्राण देकर साम्रा य बचा सकोगे ?

वीर सेन—तब फिर क्या आज्ञा होती है ?।

बाला —बंग की ओर जाना होगा।

वीर सेन—यों हीं ! बिना लड़े भिड़े ! मागध साम्रा य क्या गया ?

बाला —अब वह है कहां जा जायेगा। ग्वालियर तक शत्रु का अधिकार परीसाल हो चुका था अब मालवा भी छूटता है। उपाय नहीं देख पड़ता।

वीर सेन—हाय गापराज ! तुम धन्य थे। मै महा अभागा हूँ। हाय स्वामी स्कन्दगुप्त ! आप किधर पधार गये ? हम लोग लड़कर मरने भी नहीं पाते और मागध गद्दी छू रही है !!

बाला —(वीरसेन को हृदय से लगाकर) प्रियवर तुम धन्य हो। सेना पति मिले तो ऐसा।

वीर सेन—स्वामिन्! ऐसी कादर आज्ञा न हो। प्राण रहते हुए मालव भूमि के शूची अग्र पर भी हूणों का अधिकार न होगा।

बाला —वीरवर यदि मै प्राण खोकर भी इस पवित्र भूमि के बचाने की सौ में एक अंश तक आशा देखता तो तुम से दूना उत्साह ग्रहण करता।

वीर सेन—पर ससार क्या कहगा?

बाला —क्या हमारा मातृ भूमि प्रेम दिखाने भर को है?

वीर सेन—क्या हम लोगों को प्राण इतने प्रिय हैं? अब ये किस दिन काम आवेंगे?

ध से —हूण लोग भी तो यही चाहेंगे कि हम लोग यहीं मरें और उन्हें अकण्टक दश मिले।

बाला —क्या आज गोपराज हमारी सहायता को प्रस्तुत हैं?

वीर सेन—किन्तु उन्होंने वीरगति तो पाई।

ध वो — तो भी यथासाध्य मातृ भूमि की रक्षा प्रधान है अस झूठी वीरगति? यदि वे आज होते ता कुछ करते कि नहीं?

वीर सेन—फिर वीरगति का कथन किस दिन के लिये किया गया है?

बाला —जब उससे मातृ भूमि की रक्षा सभव हो। असम्भव काय के लिये प्राण दना वीरगति नहीं सूखता है।

ध वे —सेनापति जी! क्या हम लाग बन में बैठे हुए मलारें गाया करगे?

वीर सेन—समझा! (बालादित्य के पैरों पर गिर कर) स्वामिन्! मैंने भारी अपराध किया है। स्वामी के अपमान से बढ़ कर कोई पाप नहीं। अब उचित दंड मिले।

बाला —दड यही है कि मातृ भूमि साम्राज्य और मेरे लिये अपनी प्राण रक्षा करके भविष्य में यत्न करो। यदि बाबा

स्कंदगुप्त से आशा तक न थी पर उनका सा अवसर सामने होता तो यह भानुगुप्त भी कुछ कर दिखाता। (हृदय पर हाथ मारकर) किंतु हाय क्या करूं समय पलट चुका है। फिर भी देखना कि आगे क्या होता है ? जाओ शीघ्र सैन सन्नद्ध करके बंग की ओर प्रस्थान करो। अब इसी में कुशल और आशा दोनों हैं।

वीर सेन—जो आज्ञा। सम्भव है कि अन्त में आपही दूसरे स्कंदगुप्त निकलें।

बाला —हो सकता है अथवा कोइ दूसरा मनुष्य स्कंदगुप्त हो पड़े। हमारा भारत भारी देश है। समय मंच न जाने क्या क्या पट परिवर्तन दिखला सकता है ?

ध दो —उचित ही आज्ञा हो रही है अन्नदाता ! अच्छा राज कुमार के विषय में क्या विचार किया जावे ?

राजा —अब हम लोगों के मगध पहुँचने का अवसर कहाँ है ? यदि उस कादर में कुछ भी शक्ति एवं लाज होगी तो किसी प्रकार निकल कर बंग पहुँचेगा। कुछ चुने सिपाही उधर छिपाकर भेज दो।

वीर सेन—हा शोक !

बाला —क्या किया जावे ? शुद्ध सामरिक पक्ष पर ध्यान से कुछ संभव नहीं दिखाता।

वीर सेन—यह तो यथार्थ ही है।

ध दो —अब तो मेरा शेष प्रान्त मालवा भी जा रहा है ; मुझे क्या आज्ञा होती है ?

बाला —यथा साध्य शत्रुपक्ष की निर्बलतायें बढ़ाना।

वीर सेन—बिना सैन सन्धान अथवा अन्य साधनों के ये बेचारे क्या कर सकेंगे ?

ध वो —मैं भी बग चल न ?

ध दे —वहाँ आपके जाने से क्या लाभ होगा ?

बाला —मै समझता हूँ कि जब तक हम लोग कोई थ य साफल्य न प्राप्त करें तब तक यथा सम्भव आप शत्रु का छिद्रान्वेषण मात्र कीजिये। बग में आपके प्रबध को कौन प्रान्त रक्खा है ?

ध वो —जो आज्ञा। ईश्वर करै शीघ्र स्वामी की सेवा में पुनः प्रवृत्त होने का अवसर मिलै।

ध दे —तो अब शीघ्रता हो।

बाला —हा पवित्र मागध भूमि ! कभी फिर अपनाना। यह अधमशरीर तुम्हारा ही है।

धीर से —(रोता है। सब का प्रस्थान) (पटोत्तोलन)।

दृश्य दूसरा

[स्थान वाराणसी तोरमाण हूण का खेमा]

(तोरमाण सिंहासन पर बैठा है सामने राजकुमार वज्रगुप्त खड़ा है परिचारक लोग यथा स्थान खड़े हैं।)

तोर —राजकुमार वज्रगुप्त अब तुम्हारा आखिरी अर्ज क्या है ? जो कुछ कहना हो कह लो।

व गुप्त—प्रार्थना करने का मुझे अधिकार ही क्या है और आप उसे माने कब जाते हैं ? सैकड़ों अन्यों की भांति प्राणदंड का चित्र मेरे भी सामने उपस्थित है आज्ञा दे दीजिये।

तोर —इतना नाउम्मीद क्यों होता है ? हम ऐसा कब बोला ?

व गुप्त—इतना अर्थ तो आपके 'आखिरी' शब्द से ही प्रति ध्वनित है।

तोर —मैं उसे वापस लेता है। अर्ज करने का तुम्हें अख्तियार भी देता है। जब से तुम भागवतपुर में मिला है तब से ताईं हम तुम्हारा कोई बेइज्जती तो नहीं हुआ ?

ब० गु० —तो प्राण रक्षा की भिक्षा तो मैं माँगता ही हूँ।

तोर —शाबाश बेटे! शाबाश हम तुम्हें न सिर्फ जान बख्शता है बल्कि प्रकटादित्य का खिताब देकर गुप्त राजा भी बनाता है। मगध तक हमारा सल्तनत रहेगा बंग में तुम राज करें।

ब० गु० —बड़ी ही कृपा हुई किन्तु वहाँ तो पिता जी का राज्य है।

तो —(मुँह बनाकर) वही तो बाप जिसने सत्रह साल की उम्र तक तुम्हें कैद में रक्खा अगर हम न आता तो कौन जानता है तुम कब तक कैदखाना में सड़ता ?

ब० गु० —(सोचकर) तो क्या मैं पितृद्रोह आरम्भ करूँ ?

तोर —तुम गौर कर लेवें हम अभी तुमको रिहा करता है चाहें राज करें चाहे बेवकूफों की तरह भटकता फिरें।

ब० गु० —(फिर सोचकर) अच्छा मंजूर है। भला यह तो आज्ञा हो कि मेरे पास सेना कहाँ है ?

तोर०—फौज हमारा क्या कम है ? तुम कोशिश करें कल तुम्हारा गद्दी नशीनी होगा।

ब० गु० —जो आज्ञा।

तोर —[उठकर बज्रगुप्त प्रकटादित्य को छाती से लगाता है।]

पटाक्षेप

दृश्य तीसरा

[स्थान ग्वालियर । धमदोष की बैठक । धमदोष और ईशान वमन का प्रवेश]

ध दो —अहो भाग्य आज कैसे अनायास दशन न दिये ?

ई व —क्यों क्या अब आप हमारे सम्ब धो भी नहीं हैं ?

ध दो —हा जिसके बल पर सम्बन्धी था आज नौ वर्षों से उसी की क्या दशा है ? क्या अब भी आपके सम्ब धी होने के योग्य हूँ ?

ई० व —क्यों ? अभी आपको हुवा ही क्या है ? क्या इतना शीघ्र गुप्त साम्राज्य के मालवा और पाश्चात्य प्रान्तों के राज प्रतिनिधित्व की बू बास भी मिट गई ?

ध दो —(रोकर) अरे, यह आप क्या कहते हैं ? यदि मिहिर कुल कृपा करके प्राणदान न करता तो मैं कब का मर भी चुका था ।

ई व —यह तो इतिहास है भाईजी ! मै आज की बात करता हूँ । आप हनूमान की भाँति आपे को भूले हुये हैं नहीं तो अब भी उदधि उल्लंघन की शक्ति आप में शेष है ।

ध० दो —अरे भाई किससे क्या कहते हो ? मैं तो अब एक भिखारी से भी गया बीता हूँ , चोर की भाँति छिपता फिरता हूँ कि कहीं कोई चुगली न कर देवे ।

ई व —इन बातों में क्या रक्खा है ? आपने इन्हीं प्रान्तों में वर्षों राज्य सा किया है । आपके नाम में वह जादू है कि खड़े होते ही लाखों आदमी अनुगमन करेंगे । कुछ हिम्मत तो बाँधिये ।

ध दो —इसमें तो भाईजी सन्देह नहीं है किन्तु खड़ा किसके बल पर होऊ ? स्वामी स्वयं बहुत कुछ लड़ भिड़ कर

बग भर में राज स्थापित कर सके हैं नहीं तो वहां भी हूण साहाय्य से प्रकटादित्य का शासन हुआ जाता था।

ई व —सो भी क्या राजा रहे जब हूणों को वार्षिक कर दे रह हैं गुप्त वश तो गया बीता समझो।

ध दो—इतना तो देख ही पडता है। उधर इस वश के बौद्ध हो जाने से एक तो गृह विश्लेषण हो गया और दूसरे सम्राट के लिये कोई मरने मारने को तैयार नहीं है। करूँ सो क्या करू? अब आपही कहिये किसके बल पर हिम्मत बांध?

ई व —क्या सम्राट स्कन्दगुप्त को कोइ मन्त्र सिद्ध था?

ध दो —कौन कहता है? कि तु वे बौद्ध तो न थे! प्रजा उन्हें अपना समझती तो थी। अब क्या मठों में जाकर भिक्षुओं की सेना बनाऊ?

ई व —भाइ जी यही तो हमारे भारत में सदा से भारी रोग रहा आया है और कदाचित् रहेगा भी यहां केवल शासक सब कुछ है देश कुछ है ही नहीं।

ध दो —है क्यों नहीं? औरों को जाने दीजिए मैं तो देश के लिये जान तक देने को तैयार हूं कि तु यारे भाई! कोई सहारा भी तो हो। अब आज स्कन्दगुप्त कहां बैठे हैं जिन्होंने १२ वर्ष महायुद्ध करके हूणों सासानियों और कुशनों के छक्के छोडा दिये?

ई व —छक्के क्या छोडाये तीनों नरेशों का युद्ध में बध ही कर डाला।

ध दो —यही तो मै भी कहता हूं।

ई व —किन्तु भाइ क्या वे हाथी दांत के बने थे? थे तो हमी लोगों की भांति हाड मास के।

ध दो —पर तु हिम्मत और युक्ति तो चाहिए।

ई ध —इसका आप क्या प्रमाण माँगते हैं?

ध दो —(आश्चर्य से) अच्छा तो क्या आप आरम्भ के लिये प्रस्तुत हैं?

ई ध —क्यों नहीं? आखिर मैं भी तो राजकुमारी हर्षगुप्ता ही का पौत्र हूँ यदि भाई के सन्तान विधर्मी तथा नामर्द हो गये हैं तो बहेन के ही सही यह बूढ़ा भारत किसी प्रकार हूणों के चरण सेवन से तो बचे।

ध दो —(ईशान धमन को गले लगाकर और उनके पैरों पड़के) क्यों न हो आखिर आप भी तो गुप्तवंशी ही हैं। क्यों न ऐसी हिम्मत हो? मैं भला आपसे बाहर हो सकता हूँ?

ई ध —(उ हें उठाकर हृदय से लगाते हुये) ऐसी ही तो आशा थी पू य पिता सम्राट बुधगुप्त और तथा नतगुप्त को न जाने कितना समझाया कि यदि हिन्दु धर्म पर विश्वास शेष नहीं है तो कम से कम प्रकट में जेठों का मान स्थापित रख कर प्रजा क अपने बने रहिये कि तु दुष्ट भिक्षुओं ने उन पर न जाने क्या जादू चला दी कि कोई उपदेश काम न आया।

ध दो —अच्छा यहाँ तक नौबत पहुँच चुकी थी? फिर आपने वर्तमान सम्राट् को क्यों न घेरा? वे तो समझदार हैं।

ई ध —हैं तो सब कुछ किन्तु बोले कि धम के मामले में आप मुझ से कुछ न कहैं कहने लगे कि जब मेरा आपका मत ही नहीं मिलता तब समझाने बुझाने से क्या प्रयोजन?

ध दो —मंत्री धमदेव भी तो बुद्धिमान हैं।

ई ध —उनकी समझ में तो मामला बहुत कहने सुनने पर कुछ कुछ आया किन्तु इतना नहीं कि सम्राट् पर भारी प्रभाव पड़ता आखिर हैं तो वे भी बौद्ध ही कौन स्वधर्मी हैं?

ध दो —तो अब मामले पर आइए।

ई व —मामले की बात यह है कि जीते जी मैं भारत पर हूणों का अधिकार नहीं देख सकता न बौद्धों का आपस में सच्ची बात कहनी चाहिए।

ध दो —भई लाना हाथ! (दोनों दोनों हाथ मिलाते हैं) क्या बावन तोले पाव रत्ती बात कही है? अच्छा फिर आज ही से यज्ञारम्भ हो होगा क्या यही न कि जान जा सकती है; इससे बढ़कर तो कुछ है नहीं।

ई व —यही तो बात है, देश धर्म और साम्राज्य तीनों जाते हैं। अब किस दिन के लिये जान का लालच हो?

ध दो —तो भी यार बलाबल का विचार आवश्यक है। देखते हो कि सारे उत्तरी भारत में हूणों का डंका बज रहा है इनका सामना दाल भात का कौर नहीं है।

ई व —ऐसी हिम्मत भी किस काम की कि जान जाय और कुछ हाथ न आवे?

ध दो —यही तो मैं भी कहता हूँ इतना है ही कि मेरे खड़े हो जाने से मालवे और पश्चिमी भारत में हलचल अवश्य मच जावेगी।

ई व —इसमें क्या सन्देह है? उधर कन्नौज प्रान्त में यही बात मेरी समझो वरन् इससे भी कुछ विशेष।

ध दो०—तो फिर मार लिया है दुष्टों को; किन्तु भाई पंजाब और कोष इन दो बातों का क्या प्रबन्ध होवे?

ई व —यही तो कठिनता देख पड़ती है किन्तु मैं समझता हूँ कि विष्णु वर्द्धन वैश्य धनकुबेर हैं।

ध दो —उनका तो पंजाब पर भी अच्छा प्रभाव है किन्तु भाईजी! उनका इतनी भारी जोखिम लेना जरा कठिन है।

ई व —है तो अवश्य किन्तु एक युक्ति ध्यान में आती है यदि उन्हीं को यशोधर्मन कहकर अगुवा बनाया जावे तो कैसा ?

य दो —क्या यहां तक आप सन्नद्ध हैं ? किन्तु इसमें गुप्त वंश ता बिलकुल जाता है आप में फिर भी वह रुधिर था।

ई व —भाई साहब ! समझने की बात है अपने चित में तीन मामलों पर ध्यान है अर्थात् वश धम और गुप्त साम्राज्य पर। पहले दोनों सध ही रहे हैं रही तीसरी बात सो भी आधी पर्धी मिलती है क्योंकि दशी साम्राज्य होगा ही।

य दो —कहते तो ठीक हो अच्छा यही सही उठाओ गगाजली।

[दोनों गगाजली लेकर मिलकर चलने की शपथ करते हैं]

ई व —अच्छा अब चलो स्थाणवीश्वर चलें देखें उधर कैसी निपटती है ?

य दो —चलिये शुभ मुहूर्त साधकर चलें आपके आत्मत्याग की प्रशसा करूगा ईश्वर काय सिद्ध अवश्य करेगा।

दोनों का प्रस्थान

पटोत्तोलन

दृश्य चौथा

[स्थान काशीजी श्री विश्वनाथ मंदिर का मैदान
शशवर्मन तथा सुभद्र का प्रवेश]

सुभद्र—कहिये भाई साहब आज आपका चेहरा कुछ उतरा हुआ है, क्या बात है ?

श व —अरे यार ! तुम से क्या छिपा है ? जब से अभी गंगा स्नान में उस रूपराशि को देखा है तभी से चित्त ठिकाने नहीं है।

सु —आपको तो सामरिक विषयों में इतना चाव रहा आया है कि ऐसी बातों के लिये चित्त में स्थान ही न था अब यह कैसा रंग चढ़ा ?

श व —देखते तो हो कि हूणों के अत्याचारों से देश मुक्त करने में कई वर्षों से पूज्य पिताजी ऐसे लगे हुये हैं कि शरीर तक की सुध नहीं है।

सु —पर आपने तो मेरे ही कथन का समर्थन कर दिया।

श व —उसमें सन्देह ही क्या है ? चाहे स्वयं स्वदेश शत्रु भी होता किन्तु ऐसे देशभक्त पिता का प्राणप्रिय पुत्र होकर मातृभूमि के अनुराग में क्योंकर न लगता ?

सु —फिर स्वयं आपमें स्वदेश प्रेम की मात्रा कौन कम है ?

श व —कहाँ उनकी महत्ता और कहाँ मैं ! तुम भी क्या खद्योत को सूर्य से बराबरी करते हो ?

सु —इन बातों में रक्खा क्या है ? असली बात पर आइए कि आज यह दूसरा ढंग कैसा ?

श व —मनुष्य भी तो हूँ।

सु —फिर रूप भी ऐसा न आजतक देखने में आया है और न आवैगा तुम्हारी मनोवृत्ति अनुचित कदापि नहीं कही जा सकती हीरों का मोल राजा ही जानता है।

श व —भाई यों तो उसे कदाचित कहीं देख चुका हूँ पर जिस काल श्री गंगाजी में ग्रीवा पर्यन्त घुसकर उसने बाल खोले तब ऐसा जान पड़ा मानो चन्द्रवदन की कालिमा को श्री जान्हवीजी अपनी थपेड़ों से दूर भगाने के प्रयत्न में हों।

सु —अथवा यों कहिये कि देवापगा की श्वेतता उस रूपराशि के आगे काली पड़ गई सो बालों के रूप में चन्द्रवदन

सारा कलंक अपने समान समझ धाराओं में लीन हुआ जाता था।

श व —अहा उसके श्वेत मुख पर सहज लाली ऐसी नृत्य करती थी मानों सूय किरण उदयाचल की हिमराशि पर शोभा पाती हों।

सु —अथवा वदन कमल को प्रफुल्लित करने के लिये अरुणोदय काल की सौर किरण वहाँ खेल मचाये हों।

श व —उस प्रेयसी के गले का मुक्तमाल तरंगों की सहायता से ऐसी नट की सी कलायें करता था मानों बार बार यही निहारता हो कि द तावलि मेरे सौन्दर्य का गजन तो नहीं किये डालती।

सु —अथवा गग तरंगों में बहते हुए जलज जाल से लालिमा भी प्राप्त करके वह मुक्त माल केवल दन्तों ही का क्यों वरन् सारे मुख मडल का उपमान बनने की प्रसन्नता में उछल कूद मचाये हो।

श व —गग जल की सहायता से अंजन रूपी कालिमा से छुटकारा पाकर उसके दोनों नेत्र ऐसे शोभित थे मानों अपने नैसर्गिक सितासित एव अरुण रगों को प्रकाशित करके काशी को प्रयाग बना रहे हों।

सु —अथवा श्रीकाशीजी का माहात्म्य प्रकट करते हुए गंगा की पवित्र धारा के निमज्जन से अजन रूपी पाप पक से वे मुक्त हो रहे हों।

श व —उस ससार सौंदय शिरोमणि का लघुनथ तरंगों के कारण ऐसा हिलता डुलता था मानों उसका मोती अधर स्पर्श से प्रवाल बन जाने का भय मान कर बार बार उनसे दूर भागता हो।

सु —अथवा मौक्तिक मालवाले अपने भाइयों की कला से
हाकर उठ उठकर उ हें बार बार बधाई देता हो।

श व —लहरों से टकरा टकरा कर उसके कणफूलों की लुकियाँ
सूय की किरणों के ससर्ग से मानों चतुर्दिक उस रूप राशि
के सौ दय की घोषणा करती हों।

सु —अथवा सहस्रांशु के रश्मिताप से कोमल मुख के मुरझा
जाने के भय से फिर फिर बीच में आकर भानुकर से रक्षा
करती हों।

श व —उस च द्रवदनी के दोनों कर कमल बार बार छितरी
हुइ लटों को मुख मडल से ऐसे हटाते थे मानों जल
सम्ब ध के अपनपौ से राहु से विधु ग्रास का निवारण
करते हों।

सु —अथवा उसी सम्ब ध के कारण मल मल कर च द्रकालिमा
दूर करने के प्रयत्न में होंगे।

[नेपथ्य में गान]

जोग सों बढ़ि कछु साधन नाहीं।
लष जागत जामें अग कारज सब नूतन ह्वै जाहीं॥ (जोग सों)
वेई ससि सूरज तारागन वहै व्योम नित केरा।
फिरि फिर वेई काज करत मन उचटत कबहुँ न हेरा॥ (जोग सों)
पै जब ध्यान धारना के बल साधत पुरुष समाधी।
दुख सुख को तब दद मिटै सब रहै न आधि उपाधी॥ (जोग सों)
आयु बढ़ै चि ता सब छीजै स्वासा स्वबस सदाहीं।
धरनी के गुरु भार छिनक में खेल सरिस दरसाहीं॥ (जोग सों)

श व —अरे क्या योगिनी माता पधारती हैं?

सु —वह देखो आ ही रही हैं।

[योगिनी जी का प्रवेश]

श व—महाराजा ईशान वर्मन का पुत्र तथा महारानी हर्षगुप्ता का प्रपौत्र मैं शर्व वर्मन आपको प्रणाम करता हूँ।

यो०—प्रसन्न रहो बेटा।

सु—युवराज शर्ववर्मन का अन्तरंग मित्र मैं सुभद्र भी माताजी को प्रणाम करता हूँ।

यो—हट निकम्मे क्या तेरे पिता माता कुछ भी नहीं हैं जो किसी के केवल मित्र होने का गर्व करता है ?

सु—माताजी संसार में उच्चाशय लोग अपने ही गुणों से प्रसिद्ध होते हैं।

श व—शायद इसी से थोड़ी ही अवस्था में आपका यश संसार में सूयवत ददी यमान है।

यो०—क्या ठलुआ समाज के सभापति यही महाशय निर्वाचित हुये हैं ?

सु—तब तो माताजी ने भी मेरा यशोगान सुन लिया है; नर्क तक का राज्य स्वर्ग के उप सभापतित्व से मैं तो श्रेष्ठतर समझता हूँ।

श व—क्यों नहीं महाशय यदि ऐसे ऐसे महापुरुष संसार में प्रस्तुत न होते तब नर्क भी तो खाली ही पड़ा रहता।

सु—जी हाँ बड़े लोगों का विभव देखकर साधारण मनुष्यों को सदा से ईर्ष्या होती आई है; क्यों न माता जी ?

यो—यह तो स्वाभाविक है; कुशल इतनी ही है कि आप सरीखे महानुभाव थोड़े ही से हैं नहीं तो ईर्ष्यालुओं के मारे ससार में इतरों को स्थान न मिलता।

सु—अच्छा माताजी क्या मैं आपसे एक प्रार्थना कर सकता हूँ ?

श थ —अब तो आप सातवें आकाश से गिरकर पाताल को जा रहे हैं ; कहाँ आप सरीखे महानुभाव और कहाँ किसी से याचना !

सु —माताजी क्या कोइ साधारण व्यक्ति हैं ? यदि मै महानुभाव हूँ तो ये साक्षात् देवी।

यो —अब तुम लौकिक यवहार में कैसे उतर आये ? मैं तो स्वय ससार हित की प्राथना ईश्वर से किया करती हूँ ; भला मुझ से कोई क्या मांगेगा ? एक भिक्षुणी के पास देने को रक्खा ही क्या है ?

सु —नहीं माताजी मुझ प्रार्थी पर कुछ तो दया हो जावे।

श थ —अरे काहे को बिचारी योगिनी माता को कष्ट देते हो ?

सु —आप बीच में क्यों पडते हैं ? मै तो उनसे भिक्षा मांगता हूँ कुछ आपसे नहीं। नाहीं करने वाले आप कौन है ?

यो —अच्छा बोल क्या चाहता है ?

सु —पहले देने का बचन मिल जावे तो कहूँ।

यो —दुनियां में लोभ इतना भरा हुआ है कि ससार सन्तोष का पाठ बिलकुल भुलाये हुये है। तेरे स्वामी एक वीर पुरुष युवराज और सभी प्रकार से सम्पन्न हैं वे मुझ भिक्षुणी से कुछ मांगना भी नहीं चाहते किन्तु तू उन्हें भी इसी पंक में ढकेलता है।

सु —(योगिनी के पैरों पड़कर) माता जी ! आप अवश्य सर्वज्ञा हैं आपसे कुछ छिपा नहीं है अब कृपया दोनों प्रश्नों के उत्तर भी दे दीजिए।

यो —कैसा मूख है ! सिवा ईश्वर के किसी ने भविष्य जाना भी है कि मैं ही तुझे बतला दू ?

सु०—नहीं माताजी आप जो सोते जागते कह डालेंगी सो भी अयथार्थ कैसे हो सकता है ?

यो —देख तेरे मित्र के चित्त में अभी एक ही कामना है किंतु तू उनके लिये दो इच्छायें रखता है। मैं क्या जान सकती हूँ कि ईश्वर आगे क्या करेगा किंतु समझ ऐसा पड़ता है कि इतने शौर्य रूप प्रयत्न और देश प्रेम पर साम्राज्यश्री और त्रिलोक सौंदर्य इस पर मुग्ध न हों ऐसा होना न चाहिए।

(योगिनी का वेग से प्रस्थान)

श व —अहा कैसे बढ़िया वाक्य थे! पर यार तुम बड़े लालची हो योगिनी माता से भीख माँग ही बैठे।

सु —जी हाँ पर अब तो हर प्रकार से तुम्हारे पौ बारह दिख रहे हैं।

श व —अरे साम्राज्य का लाभ तो स्वयं पिताजी ने छोड़ रक्खा है।

सु —पर सम्राट बालादित्य भी महात्मा हैं शायद उनका उत्तराधिकार अंत में उनके कुटुम्ब के बाहर न आवे।—प्रकटादित्य के असामर्थ्य से मेरा विचार महाराजा की ओर दौड़ पड़ा। अब काम की ओर आइए। साहित्य तो आप खूब फटकार गये कुछ यह भी जाना कि वह रूपराशि है कौन?

श व —इतना समझने के लिये अवकाश ही किसे मिला? किंतु देखने में कोई राजकुमारी सी प्रतीत होती थी।

सु —जब तक आप उसके सौंदर्य पर मुग्ध होकर तन बदन से भी अचेत हो रहे थे तब तक मैंने उधर कुछ पता लगाया तो मालूम हुआ कि वह कदाचित महाराज धर्मकोष की कन्या है।

श व —तब तो ईश्वर ने सभी प्रकार से अच्छा संयोग मिला दिया पर देखिये क्या होता है?

सु —देखा आगा पीछा विचार कर काम करना उतावली न कर जाना कि कहीं पिताजी को बुरा लगे और उनके धर्मघोष जी से राजनीतिक सम्बन्ध में विशृंखलता उपस्थित हो उठे।

श ध —भाई जिह्वा तो तुम्हारी चमड़े की अथच अशुचि है पर कभी कभी बात तुक की कह भागते हो। तो भी तुम जानते हो कि उनके साम्राज्य स्थापन सम्बन्धी अनिवार्य और अथक प्रयत्नों में अब तक तो यथासाध्य मैं भी सहायता करता रहा हूँ।

सु —यथासाध्य मात्र सहायता क्यों आप भी तो जान पर खेल खेल कर ग्राम ग्राम नगर नगर और प्रान्त प्रान्त में चिरकाल से सर मारते फिरते हैं। क्या मैं कुछ जानता ही नहीं?

श ध —फिर भी कहाँ पूज्य पिताजी का उद्दाम प्रयत्न और कहाँ मेरी बात?

सु —यह तो मैं नहीं जानता किन्तु इन तीन चार वर्षों के भीतर आपके साथ दौड़ते दौड़ते मेरे तो फुचड़े उड़ गये हैं।

श ध —आखिर तो सुकुमार ब्राह्मण ठहरे न।

सु —सुकुमारता के ही बल पर उस दिन आपके साथ पाँच छूर्यों के साथ केवल हम दो ने तलवार चलाई होगी।

श ध —हाँ उस दिन तो तुमने भी दो शत्रुओं को मार गिराया।

सु —जब आपने तीन को मारा तो क्या मैं दो भी न मारता?

श ध —फिर भी पिता जी की तत्परता अमोघ है ऐसे ऐसे बीसियों मोहरें वे पार किये बैठे हैं।

सु —भाई तत्परता तो आपकी भी कम नहीं है किन्तु देखे रहना कि प्रेम मार्ग में पैर रखने से उनमें कहीं शैथिल्य

न आ जावे। आपकी अमोघ पितृभक्ति और कौशल से भय तो ऐसा नहीं है।

श व —यथासाध्य गड़बड़ न होने पावेगा।

सु —अजी प्रेम मार्ग भी तलवार की धार है इसीसे बारबार कहता हूँ।

श व —तो समय समय पर सचेत करने से मत चूकना।

सु —चूकंगा क्यों? किंतु एक बात और भी है राजकुमारीजी की जो अन्तरंगा सखी हैं उन्हें देखकर मैं भी कुछ आपे के बाहर हो गया हूँ।

श व —अच्छा तो लाना हाथ यार मेरे अब हमारी तुम्हारी और भी अच्छी निबटेगी। (दोनों प्रेमालिंगन करते हैं) हम दोनों एक दूसरे को सचेत भी करते रहेंगे और खूब निबहेगी जो मिल बैठेंगे दीवाने दो।

सु —अर यह देखिये सखी के साथ राजकुमारीजी शायद शिव पूजनार्थ इधर ही पधारती हैं जल्दी से जाकर देवार्चन करने लगिये जिसमें उनके पूजन काल में उधर जाकर असभ्य न कहलाइए।

श व —युक्ति तो अच्छी है। (जाकर पूजन करने लगता है)

[सखी के साथ राजकुमारी इन्दु भी मन्दिर में प्रवेश करके शिव पूजन प्रारंभ करती है। सखी साथ रहती है पर अन्य अनुगामी लोग सामने मैदान में खड़े रहते हैं]

पुजारीजी—अहोभाग्य आज हमारे जजमान युवराज महाशय तथा राजकुमारीजी दोनों प्रायः साथ ही पूजनार्थ पधारी हैं।

श व —पुजारीजी पूजन पूर्णता से हो। कोई अंश छूट न रहे।

पु जी —नहीं अन्नदाता ! ऐसा भला कैसे हो सकता है ? यदि आज्ञा हो तो पहले राजकुमारीजी को पूजन करा न दूं ?

श व —हाँ अवश्य यही तो उचित है।

रा कु —नहीं पुजारीजी पहले युवराज महाशय पधारे हैं। इन्हीं का पूजन प्रथम होना चाहिये। मुझे कोई शीघ्रता नहीं है।

सखी —आप कर न पहले लीजिये।

श व —हाँ हाँ यही योग्य है

रा कु —नहीं पहले आने वाले को प्रथम अवसर मिलै देवमन्दिर में पक्षपात ठीक नहीं।

श व —(पूजन करके स्तुति पढ़ता है। इधर राजकुमारी भी विधिपूर्वक पूजन की कृत्य प्रारंभ करती है। एक एक बिल्वपत्र तक बहुत पोंछ पोंछ और सम्हालकर चढ़ाती है)

श व जै जै शिव तुम सब के स्वामी।
निराकार साकार ईश तुम घट घट अन्तरजामी॥
यजुष अथर्व वेद में तुम हीं परमेश्वर गुनखानी।
वेद पूरबहु तब पूजन शिव लिंग रूप हम जानी॥ (जै जै)
सब सों प्रथम ध्यान तब देखो हे पशुपति हे ध्यानी !
तब बालन का बग सम्हारै कौन महाभग मानी ? (जै जै)
दखि प्रमाण हड पा मोहंजोदा ? अति नामी।
को अब करि सन्देह सकै प्रभु जैति नमामि नमामी॥ (जै जै) (१)
सीस पै गंग तरंग जगान पै नागन को बर मौर रह्यो फबि।
भाल मयंक गरे सिरमाल प्रभा तन की लखि कोटि लजैं रबि॥
कंठ हराहरु अंग बिभूति भनै सिरमौर कहा बरनौं छबि।
केहरि खाल लसे कटि पै करि से भ्रम जाल रहैं सिगरे दबि॥ (२)

बरद सवार गर मुंडन को हार
मार नास करतार छार अगन में धारे हैं।
सीस पै अपार जटा जूटन को भार
तापै गंग धार परमा अनूपम पसारे हैं।
सुनत पुकार कछु लावत न बार
दुख करत सँहार चार वेद यों पुकारे हैं।
परम उदार सुखकार यार दीनन के
तेइ ससिभाल सबही के रखवारे हैं॥ (३)

सखी—राजकुमारीजी! अब कब तक पूजन किया करोगी? डेरे को चलना होय न?

रा कु—कुछ तो पूजन हो जाने दो। (शर्वमन का प्रस्थान।)

इच्छन धरै न त्यों नवीनता करै न
बदलै न नेकु तऊ सब जग रचि डारो है।
नभ सम व्यापि रह्या सकल पदारथनि
काहू सों तबौ न मिलि औरन बिसारा है॥
सब सों मिलाइ रहै ध्यान में आवै तबौ
ऐसो कछु जाल जगमाहक पसारो है।
सब सो पृथक पुनि सबके समीप जगरूप
जगदीश एक ईश्वर हमारो है॥ (४)

[सखी सहित राजकुमारी का प्रस्थान]

पटाक्षेप

दृश्य पाँचवाँ

[स्थान स्थाण्वीश्वर थानेश्वर]

(विष्णुवर्द्धन का महल। विष्णुवर्द्धन और हरवर्द्धन का प्रवेश)

हर व—काकाजी आप इस राजनीति के झगड़े में क्यों पड़े हुए

हैं ? अपने पूर्व पुरुष कब इन बातों में पड़ते थे ? अपना जगत्सेठ पन क्या थोड़ा है ?

वि० व —बेटा तुम इतने भीरु क्यों होते हो ? प्रत्येक भारतवासी बराबर है। क्या क्षत्रिय और क्या वैश्य ! राज्य के लिये तो केवल प्रबन्ध पटुता चाहिये। वैश्य अपने को क्षत्रियों से क्यों कम लगावें ? मैं तो आज सिवा स्थाणुदेव के किसी को शीस नहीं झुकाता।

हर व —क्या मैं वैश्यों को क्षत्रियों से कम मानता हूँ ? मेरा तो कथन केवल इतना है कि इन झमेलों में जोखिम की मात्रा विशेष है। क्या निश्चय है कि आप इतनी बड़ी हूण शक्ति को विमर्दित कर सकेंगे ?

वि० व —मैं तो समझता हूँ कि ईशान वर्मन और धर्मदोष का उत्तरी तथा मध्य भारत में बहुत कुछ प्रभाव है। इधर पंजाब में मैं कुछ कम नहीं हूँ। हम तीनों की शक्तियाँ सुगमता पूर्वक हूण बल का सामना कर सकेंगी विशेष तया उत्तरी और मध्य भारत में।

हर व —क्या आप समझते हैं कि युद्धों में मुख्य भाग लेकर भी ईशान सदा आपके अनुयायी बने रहेंगे ?

वि० व —यदि उन्हें ऐसा करना न होता तो धर्मदोष को साथ लेकर दो सप्ताहों तक मुझे समझाते बुझाते क्यों रहते ? क्या तुमको उनके किसी कर्म या कथन में राजभक्ति के प्रतिकूल कुछ देख पड़ा है ?

हर व —सो बात तो नहीं है किंतु मुझको इस आरम्भ में जोखिम की मात्रा प्रचुरता से देख पड़ती है।

(प्रतीहारी का प्रवेश)

प्रती —जै जै महाराज ! महाराजा ईशान वर्मन तथा धर्मदोष बाहर प्रस्तुत हैं।

वि व —उन्हें अभी आने दो। (प्रतीहारी का प्रस्थान ईशान वर्मन और धर्मदोष का प्रवेश) देखिये महाराजा आपके मित्र हरवर्द्धन का चित्त कुछ आगा पीछा करता है।

ई व —इनको हर बात में जोखिम का भय बहुत लगा रहता है। (हर वर्द्धन से) क्यों मित्र क्या सूद की दर ठीक नहीं बैठती ?

हर व —कहाँ बैठती है ? आज कितने दिनों से दौड़ते हुए आपके तलवों की खाल उड़ गई है किन्तु फल अभी तक क्या निकला ?

धर्मदोष —फल तो अब सामने ही आने वाला है। मेरे भाई दत्त और इनके सुपुत्र शववर्मन भी हम दोनों के अतिरिक्त बहुत कुछ दौड़ धूप करते रहे हैं। हम चारों के प्रयत्नों से सारा मालवा आपके अधिकार में आता हुआ देख प ता है।

हर व —अच्छा माना कि मालवा आपको मिल गया जैसा कि मुझे भी सम्भव लगने लगा है तो स्थाण्वीश्वर छोड़कर क्या हम लोगों को उज्जयिनी में आना होगा ?

वि व —ऐसा क्यों होने लगा ? वहाँ का प्रबन्ध तो यही धर्मदोषजी तन्त्रपहोकर चलावेंगे।

हर व —तब फिर स्थाण्वीश्वर में बने रहकर क्या हम लोग हूणा कोप से सुरक्षित रह सकेंगे ?

ई व —हम ऐसे कौन गये बीते हैं कि हूणा खास थानेश्वर में आपको जीत सकें ?

वि व —ऐसा तो नहीं हो सकता। यदि हम इतने बलहीन होते तो यहाँ रहकर इतना भारी कोष ही मिहिरकुल से कैसे सुरक्षित रहता ?

हूर ष —अच्छा मान लिया कि थानेश्वर में भय नहीं है किन्तु मध्य और उत्तरी भारत से हूणों का निकालना यदि सुगम होता तो वहाँ उनका अधिकार ही कैसे हो जाता ?

ई ष —हूण अधिकार तो गुप्त सम्राट के गृहविश्लेषण तथा हिन्दू समाज के उनके सहायक न रह जाने से हुआ। कौन भारी युद्ध हूणों ने जीता है ? गुप्तों की बलहीनता एवं हिन्दू संगठनाभाव से भारत में हूण साम्राज्य चार दिनों से स्थापित है।

हूर ष —और सीथियन तथा कुशान साम्राज्य क्यों जमे तथा इतर शक लोग प्रायः ४ वर्षों तक भारतीय विविध प्रान्तों में राज्य क्यों करते रहे ?

वि ष —सीथियन साम्राज्य तो कोई जमा नहीं हाँ पंजाब भर में कुछ कालमात्र वे शासक रहे। इसका भी कारण मौर्य पतनान्तर देश में समुचित संगठनाभाव था। कुशानों के उत्कर्ष काल में उत्तरी भारत में कोई संगठित शक्ति थी ही नहीं और कनिष्क बहुत प्रबल था।

हूर ष —तो यही कैसे मान लिया जावे कि आज दिन सर्वोत्कृष्ट संगठन उपलब्ध है ?

ई ष —देख तो ऐसा ही पड़ता है किन्तु यदि फल उलटा पड़े तो भी हमारा प्रयत्न देश हितार्थ है। भगवान ने गीता में कर्मण्येवाधिकारस्ते मा फलेषु कदाचन का जो उच्च उपदेश दिया है वह कैसा है ? देश प्रेम में कितना भारी माहात्म्य है ? अपने ऊपर थोड़ा सा जोखिम लेना ठीक है या सदा को इन वन्य जन्तु हूणों का शासन भार वहन ?

वि व —प्रश्न तो आपका बहुत ही योग्य है किन्तु इससे इनके जोखिम वाले विचारों का उचित उत्तर नहीं मिलता। सूद की दर लगाना और देश हितार्थ प्राण देना ये दो पृथक वस्तुयें हैं। मैं तो दोनों का समर्थन करता हूँ किन्तु इनसे प्रत्यक्ष क्यों नहीं कहते कि जहाँ तक समझ पड़ता है अपनी विजय निश्चित है।

ध वो —सो तो प्रकट ही है। वह दिन बहुत निकट है जब हम आपको सम्राट कह कर पुकार सकेंगे।

इ व —एवमस्तु।

[सबका प्रस्थान]

पटोत्तोलन।

दृश्य छठवाँ

स्थान उज्जयिनी की सराय

(हिन्दू भठियारा तमोली नाई और तांगा वाला बैठे हैं)

भठि —अजी आजकल तो सराय में मक्खियाँ भिनक रही हैं।

तमो —भाई जब से हूणों का देश में राज्य हुआ है रास्ते तक कम चलते हैं।

नाइ—चलें कहाँ से डकैतों की जोखिम में कौन पड़े?

भठि —फिर किसी सुन्दरी स्त्री का किसी पथिक के साथ होना तो रक्षकों को भी डकैत बना देता है।

तमो —क्या कहें दोस्त न कोइ सराय में आता है न राह चलती है और न एक पान खाने वाला नजर पड़ता है। अब तो किसी दूसरे काम की सोच रहा हूँ।

नाइ—अजी क्या बकते हो? तुम भला शाम तक धेली बारह आने के पैसे तो घर ले ही जाते हो यहाँ जब से इन

निमुच्छों का राज हुआ है तभी से हजामत का शौक ही देश से उठ गया है।

ता० वा०—तुम तो भाइ हजामत न सही जजमानी ही कमा खाओगे इधर सवारियों की सूरत नहीं नजर आती हम क्या करें ?

भठि०—भाई कुछ पूछो मत इसी उज्जैन में मारे खचाखच भीड के राह चलना कठिन था जिसे देखा सराय में कोठों ही के लिये मुह फैलाये फिरता था। अब कुछ कहत ही नहीं बनता।

तां० वा० सच है आज इस उज्जैन में हमारा ही तुम्हारा तो मरन है।

तमो०—प्यारे इन हूणों का धरम क्या है सो भी पता नहीं लगता।

नाइ—कहा तो यार सच ही तोरमाण ने गांधार में सुना सैकडों बौध मठ गिरा दिये और भिक्षुओं का कतलाम करा डाला।

ता० वा०—सुना तो हम ने भी था लेकिन जब से उनके बेटे मिहिरगुल बादशाह हुये हैं तब से दीनी झगडा नहीं है।

नाई—मिहिरगुल नहीं मिहिरकुल कहो जी।

तां० वा०—क्या हम तुम्हारी तरह घर घर मारे मारे डोलते हैं जो सब के नाम याद रक्खें ? हम अपने गुल ही कहते हैं।

तमो०—गुल नहीं तुम सुल कहो लेकिन बादशाह का मामला है नाम बिगाडने से कहीं पकड़े पकड़े न फिरना।

ता० वा०—यह तो भाइ सच कहा। कान पकडता हूँ अब सिवा कुल के कभी गुल न कहूँगा।

भठि०—हां दीनी झगड़े के बाबत क्या कह रहे थे ? है तो कुछ सचमुच नहीं।

नाई—हैं ता हमारे बादशाह शैव पर मानते सब धरमों को बराबर हैं

तां बा —अजी उनको ता हसीनों के पियाले से काम धरम को लेकर क्या चूल्हे में डालें?

तमो —यह तो ठीक है लेकिन स तनत का इन्तिजाम बिगडने नहीं पाता।

भठि —और क्या बिगड़ेगा? मु क तबाह है किसी की जान माल बहूबेटी का कोई ठीक नहीं है हां फौज दुरुस्त जरूर है।

नाई—इससे राज का क्या बिगडता है? उनकी आमदनी में तो कमी नहीं है।

(एक बटोही का साथी सहित प्रवेश)

बटो —(भठियारे से) क्या कोई कोठरी खाली होगी?

भठि —आइये मालिक बैठिये सारी सराय आप ही की है। जैसा कहिये इन्तिजाम करदूँ।

बटो —बस एक कमरा काफी होगा।

भठि —जैसी मर्जी आप तब तक यहीं बिराजिये मैं सब इन्त जाम किये देता हूँ।

(दोनों का बैठना भठियारे का प्रस्थान)

नाई—(पहिँचान कर) कहिये जजमान आप यहां कहां? आपकी ता शादी हो रही थी।

बटो —उसी के ता चक्कर में हूँ। औरत कुछ रूपवती थी तहसीलदार साहब के पस द पड गई। अब छोड छुट्टी के लिये बोलौवा है।

तमो —अरे! इतना गज़ब! तुम अपनी स्त्री कभी न छोडना।

बटो —भला प्राण रहते किसी ने अपनी स्त्री छोडी है? उस

तहसीलदार साले को कच्चा ही चबा जाऊंगा। और नहीं तो किसी प्रकार कन्नौज के राज्य में जा छूँगा।

नाई—वहाँ तक पहुँचोगे कैसे? रास्ता कौन साफ है?

बटो—कोई न कोई युक्ति तो करनी ही पड़गी। अभी तो खर्च पर्च के जोर से काम निकालने की फिकिर में हूँ।

तां पा—यह भी ठीक है। ऐसे मामले आजकल बहुत चल रहे हैं। जब से गुप्त राज्य यहाँ से हटा है अफसरों की ईमान का कोई ठिकाना नहीं है।

बटो—जहाँ तक ऐसी युक्तियों से काम चल जावै तब तक काहे बापदादों की चौखट छोड़ूँ?

भठि—(वापस आकर) महाशयजी आपका कमरा तैयार है।

बटो—(साथी से) तब तक वहाँ चल कर ठीक ठाक करो।

साथी—बहुत अच्छा। (जाता है)

(बीस पचीस पुरजनों का प्रवेश)

भठि—आइये भाइयो बैठिये। (सब बैठते हैं)

एक पुर—सुना आज यहाँ महाशय दत्त की अवाई थी कहीं देख नहीं पड़ते।

भठि—अभी तो नहीं पधारे आते ही होंगे। उनके कारण तो कभी कभी सराय चमक उठती है।

दू पुर—तब तक उनके लिये कोई आसन तो बिछाया जावै।

भठि—बहुत अच्छा अभी इंतजाम करता हूँ।

(बाहर जाकर तीन अच्छी कुर्सियाँ लाकर डालता है। महाशय दत्त का दो साथियों के साथ प्रवेश। सब लोग उचित अभिवादन करते हैं। आप तुक कुर्सियों पर विराजते हैं)

ए पु—(दत्त से) महाशयजी आप तो बड़े पंडित हैं। कुछ देश की दशा पर क्यों नहीं विचार करते?

दत्त—कैसे जानते हो कि हम लोग बेसुध बैठे हैं? आज उज्जयिनी के इन दोनों नेताओं को लाकर आप लोगों से कुछ प्रार्थना ही करने को आया हूँ।

दू पु —महाशय! आज्ञा न कहकर प्रार्थना क्या कहते हैं? जहाँ आप जैसे पंडित और हमारे ये दोनों मालिक हों वहाँ क्या हम लोग बाहर हो सकते हैं?

एक नेता—ऐसी ही तो आप लोगों से आशा थी तो भी हमारे मित्र दत्तजी की इच्छा है कि आप सब कुछ समझ बूझ कर काम करें।

प पु —जो आपने समझ लिया वह हम सब पहले समझ चुके।

दू नेता—तो भी सब के साथ विचार हो जाना उचित है।

दू पु०—क्या हर्ज है आपकी बातें सुनकर हम लोगों को भी कुछ ज्ञान ही मिलेगा।

दत्त—अच्छा महाशयो! सुनिये आज मैं भारतीय इतिहास के कुछ दृश्य आपके सामने रखना चाहता हूँ। आशा है आप उन्हें ध्यानपूर्वक सुनेंगे व उन पर मनन करेंगे। (दोनों नेताओं से) आप सज्जनों से मैंने कामकाजू बातें की थीं जो अब कहने वाला हूँ वह अभी तक आपसे भी नहीं कहा है।

प नेता—अवश्य कहिये। हम लोग ध्यानपूर्वक सुनेंगे।

दत्त—मेरे कहने का प्रयोजन केवल इतना था कि मैं एक नये प्रकार से अपने लोगों के कुछ पूर्व पुरुषों का चित्र आपके सामने रक्खूगा। यदि कोई बात कहनी हो तो आप भी निःसंकोच भाव से पूछते जाइयेगा।

दू ने —इन बातों से हम लोगों का कुतूहल बहुत बढ़ रहा है।

दत्त—सब से बड़ी बात यह है कि देश प्रेम को सर्वोत्कृष्ट धर्म समझना चाहिये।

प ने—यह तो ठीक ही है इतर धर्म एक एक व्यक्ति से सम्बद्ध हैं किन्तु देश प्रेम सारे देश भाइयों का धर्म है।

दत्त—और इसका सभी पर प्रभाव भी सब से अधिक पड़ता है।

दू ने—प्रभाव तो थोड़ा बहुत धर्म के इतर अंगों का भी न्यूनाधिक संख्या में व्यक्तियों तथा कुछ अंशों में सारे देश पर पड़ता है किन्तु देश प्रेम का फल बहुत अधिक है।

दत्त—अब मैं उदाहरणों पर आता हूँ।

एक नाग—जरूर मालिक! इसीसे हम लोग समझ भी अच्छा सकेंगे।

प ने—बिलकुल ठीक है।

दत्त—अच्छा तो सुनिये। सब से पहिले राजा बलि ने व्यक्तिगत धर्म दानशीलता को ऐसा बढ़ाया कि दैत्य दानवों का साम्राज्य ही नष्ट हो गया। हिरण्याक्ष हिरण्यकशिपु तथा समुद्र मन्थन के समय वाले पराजयों से दैत्य दानवों की इतनी हानि न हुई जितनी कि इस दानशीलता से।

दू नाग—तो क्या बलि से भी देश द्रोह बन पड़ा?

दत्त—थे तो वे उच्च विचाराश्रयी किन्तु फलत उनकी दान शीलता देश द्रोह कारिणी हुई।

दू ने—कम से कम उसने दैत्य दानवों की जातीयता उस काल नष्ट कर दी।

दत्त—अब महर्षि कहे जाने वाले वशिष्ठ पर आते हैं।

प नाग—क्या उस कुलपति के कर्मों में भी कोई देश द्रोह था?

दत्त—यही तो बात है। हमारे भारतवासी देश प्रेम के अपूर्व गुण की कुछ ऐसी अवहेलना करते आये हैं कि एक देश द्रोही को ही हम सब से ऊंचा महात्मा मान रहे हैं।

प ने —ऐसा।

दू नाग —आखिर इसकी विवेचना ता कीजिये।

दत्त—सुनिये। वशि ठ महाशय ने रा य के असली उत्तराधिकारी और पीछे स्वामी सत्यव्रत को कुछ छोटे बड़े दोषों के कारण त्रिशकु कह कर रा यच्युत रक्खा तथा स्वय दीर्घ काल पयन्त रा य प्रब ध किया।

दू ने —इसमें तो एक व्यक्ति के अधिकारों पर चाहे हस्तक्षेप हुआ हो किन्तु म्लच्छमान के अतिरिक्त दश द्राह न था।

दत्त—आगे ता दखिये। समझ पड़ता है कि प्रजा ने स यव्रत का पक्ष लिया किन्तु वशिष्ठ ने अपना अधिकार चिरस्थायी रखने को म्लेछों की भारी सेना आय कोष यय से खड़ी करके आपत्ति उपस्थित करने वालों को पस्त किया तथा उसी से कान्यकुब्ज नरेश विश्वामित्र की भी आय सेना को नष्ट किया।

दू ने —हां इन कार्यों में अवश्य दश द्रोह समझ पड़ता है।

दत्त—इस पर राज्य छोड़ और धार्मिक बल प्राप्त करके विश्वा मित्र ने सत्यव्रत की सहायता दी जिससे उन्हं गद्दी मिल गई और वशिष्ठ को पुराहित के उच्च पद से हटाकर राजा ने विश्वामित्र का प्रतिष्ठित किया। फिर भी धम धम पुकारने वाले लागो ने महर्षि विश्वामित्र के इस दशाप कारी कार्य को केवल एक धमगुरु के कारण अनुचित ठहाराया यद्यपि वह गुरु खुले खुले दश द्राह में निरत था।

प ने —यह तो भाई प्रत्यक्ष ही दख पड़ता है।

दत्त—फिर जगत्प्रसिद्ध धार्मिक महात्मा राजा हरिश्चन्द्र तक ने दश प्रेमी विश्वामित्र को पदच्युत करके उसी देश द्रोही वशिष्ठ को प्रतिष्ठित किया जिसने म्लेच्छों की

सहायता से आर्यों पर शासन तथा आर्य सेना का पराभव किया था।

प ना —जरूर महाशय इस मामले में लोगों के उनके धार्मिक विश्वास ने देशद्रोह की सहायता अवश्य की।

दू ने —इतना ही क्यों उन्हीं वशिष्ठ और हरिश्चन्द्र के धर्म ने ब्राह्मण के बलिदान तक को धर्म का एक अंग माना।

वक्त—यही तो बात है। बेचारे विश्वामित्र ही को प्राचीन भारत के माथे से यह भी भारी कलंक हटाना पड़ा।

प ने —किन्तु महाशय रावण के मामले में तो महर्षि अगस्त्य के धर्म ने देश प्रेम को अच्छी सहायता दी।

वक्त—अवश्य यह मेरा कथन थोड़े ही है कि व्यक्तिगत धर्म त्याज्य है। मैं तो देश प्रेम सर्वप्रधान मानता हूँ।

दा ने —सो तो हई है।

प ने —अच्छा अब इधर के उदाहरणों पर आइये।

वक्त—सुनिये इधर सीदियनों शकों कुशानों तथा हूणों के आक्रमण समय समय पर हुये। जगतविजयी सिकन्दर ने पंजाब तो जीता किन्तु महापद्मनन्द का सामना करने की हिम्मत न कर सका। अनन्तर केवल छै वर्षों के अन्दर चन्द्रगुप्त और चाणक्य ने सीदियनों को पंजाब से मार भगाया और २४ वर्षों के प्रयत्नों से भारत में भारी साम्राज्य स्थापित किया।

दू ने —इस बार भारतीयों ने सीदियन पराजय में भारी महत्ता दिखाई क्योंकि फारस अफगानिस्तान आदि में यह प्रभुत्व सैकड़ों वर्ष चला।

वक्त—अवश्य। इधर चाणक्य ने २ वर्ष और प्रयत्न करके मौर्य साम्राज्य को ऐसा दृढ़ बनाया कि अशोक के राजनीतिक

कुप्रबन्ध के होते हुए भी मौर्य शासन प्राय ११३ वर्ष चला। जब मौर्य पस्त हो गये तब सीदियनों ने फिर जोर लगाया किन्तु पुष्यमित्र शुंग ने धर्मातम कायर मौर्य सम्राट बृहद्रथ का वध करके उन्हें फिर पराजय दी। ११२ वर्ष पर्यन्त शुंग प्रबन्ध ऐसा अच्छा रहा कि सीदियनों के दो छोटे छोटे राज्य तो पंजाब में स्थापित हो गये किन्तु वे आगे न बढ़ सके।

प ने —बेशक चन्द्रगुप्त चाणक्य पुष्यमित्र तथा इतर शुंग साम्राटों ने विदेशियों से भारतीयों की रक्षा करके सभी भारतीयों को ऋणी बना रक्खा है।

दत्त—किन्तु इन्हीं अनुपमेय पुरुष रत्नों को केवल धार्मिक अन्तर के कारण हमारे बौद्ध भाई बहुत ही निन्द्य समझते हैं। चाणक्य और सम्राट चन्द्रगुप्त को वे गालियाँ तक देते हैं। बेचारे चाणक्य के लिये परलोक में भी नरक ही प्रस्तुत है। इधर शुंग सम्राट गोमि हैं और पुष्यमित्र गोमि मुख्य तथा उसके अनुयायी जन्तु।

प पु —महाशय गोमि का क्या प्रयोजन है?

दत्त—वे ही देश द्रोही जानें। जान पड़ता है कि इससे शायद बैल का मतलब हो। इन बातों से प्रकट है कि हमारे बौद्धों को स्वदेश तथा देशियों से कोई प्रयोजन नहीं। कोई विदेशी चाहे अब भारत पर अधिकृत होकर लाखों करोड़ों भाइयों का वध तक कर डाले किन्तु यदि इन स्वदेश शत्रुओं के मठों की पूजा कर देवे तो उसके लिये बीस जन्मों तक स्वर्ग प्रस्तुत है और बेचारा हिन्दू देश रक्षक यदि मठों की पूजा न करे तो वह जन्तु मात्र है और नरक को सीधा जावेहीगा।

कई पु —धिक्कार है इन स्वदेश शत्रुओं को।

दत्त—अब शकों का मामला देखिये। उनकी दो धारायें आईं जिनमें से एक शक ही कहलाई और दूसरी कुशान। शकों को पमार विक्रमादित्य ने पहले पराजित किया तथा चन्द्रगुप्त विक्रमादित्य ने उनके राज्य को नष्ट करके उन्हें हिन्दू समाज में मिला लिया।

प ने —इन शकों के भी प्रतिकूल बौद्ध एक अक्षर नहीं कहते। बड़ी कृपा यही है कि दोनों विक्रमों को कोसते नहीं।

दत्त—उन लोगों ने इनके मठों का थोड़ा बहुत मान किया न था इसी से वे नरक से बच गये किन्तु उन देश त्राताओं की प्रशंसा इन्होंने न की।

दू ने —अब दूसरी शक धारा का कथन कीजिये।

दत्त—वह धारा प्रथम के पीछे आई। उसने भारी साम्राज्य स्थापित किया पर पहली के अस्त होने के पूर्व ही वीर नागों द्वारा उसका साम्राज्य ध्वस्त हो गया। आर्यों के ऊपर वनस्पर आदि राजप्रतिनिधियों के द्वारा उसने बड़ा ही अन्याय किया यहाँ तक कि यह राजाज्ञा निकली कि कोई अपने को सिवा शक के आर्यादि कहे भी नहीं। फिर भी उसके बौद्ध मत का सत्कार करने से इन स्वदेश शत्रुओं द्वारा उसका सदैव यशोगान हुआ।

प ने —इन लोगों को मठों से प्रयोजन है देश बन्धुओं पर कितना भी अन्याय हो इनके नेत्रों में वह समाता ही नहीं।

दत्त—मैं बौद्ध धर्म की निन्दा नहीं करता किन्तु बौद्धों के स्वदेश द्रोह का शतमुख से तिरस्कार करता हूँ। इनका प्रयत्न सदैव राजनीति मर्दन अथच बौद्ध धर्म वर्द्धन रहा है। जो वशिष्ठादि के उदाहरण ऊपर आये हैं उनसे अधिक पातक ये लोग करते हैं क्योंकि उस काल भारतीय प्रजा

पर अत्याचार न था वरन् राजकीय सत्ता पर अनुचित अधिकार मात्र का प्रयत्न था।

दू० ने०—क्यों भाइयो हमारे मित्र के कथनों में आपको कहाँ तक सार समझ पड़ता है? मै तो इन्हें अक्षरशः सत्य मानता हूँ।

कई पु०—बिलकुल ही स य है।

दत्त—बड़ी कृपा। अच्छा अब हूणों का उदाहरण दखिये। इन घृणास्पद विदशियों के कर्म अ याचार की मूर्ति हैं। ये लाग मनुष्य को व य ज तु से भी गया बीता समझते हैं। नर वध में इ हे इतना भी संकोच नहीं है जितना किसी को एक खटमल के मारने में हो।

कई पु०—यह ता रोज ही सामने रहता है।

दत्त—पर स्त्री छीनना धन लूटना और लोगों के शिर काटना ये ही इनके तीन काम हैं।

प० ने०—मद्यपान के आधिक्य पर भी ईश्वर ने इनके शरीरों में इतना बल दिया है कि कोई साधारण मनुष्य एक हूण का सामना नहीं कर सकता।

दू० ने०—तभी ता इन्होंने योरोप तथा एशिया दोनों को दबा रक्खा है। सिवा सम्राट शिरोमणि स्कन्दगुप्त के सारे ससार में इनका दमन कोइ नहीं कर पाया है। बेचारे बालादित्य ने सामना करने का भी साहस न करके बग से इतर सारा दश इनके अपण कर रक्खा है।

दत्त—बंग के लिये भी तो वे कर दते हैं। मैं कहता हूँ कि जब से पु य गुप्तवश बौद्ध हा गया है तभी से इसमें पौरुष का नाम नहीं रहा है। वही गुप्त सम्राट् स्क दगुप्त थे और वही बालादि य हैं। भेद है तो केवल मत पार्थक्य का किन्तु दोनों में अ तर सभी आँख वाले देख रहे हैं।

प ने —बौद्धों को हिंदू मत पर गालिप्रदान से अवकाश ही कहाँ मिलता है जो व युद्ध सामग्री आदि तुच्छ बातों पर ध्यान दे सकें।

दत्त—फिर एक बात बड़ी अनोखी सामने आती है कि जहाँ राजनीति पर धर्म का प्रभाव बढ़ता है वहाँ व्यक्तिगत स्वतन्त्रता भी मिट जाती है।

प पु —यह तो बावन तोले पाव रत्ती ठीक है। मांसाशन छोड़िये माता पिता के दास बने रहिये अपनी आय का उपभोग स्वयं न करके इतरों को उससे लाभ पहुँचाइये इत्यादि कहाँ तक कहें? मैं इन्हें बुरा नहीं कहता पर अति सर्वत्र वर्जयेत भी कोई बात है।

प ने —बिलकुल ठीक। मैं क्या खाऊं क्या नहीं इसका निर्णय मेरा वैद्य करेगा न कि गुरु मैं अपने माता पिता का कितना मान करूंगा इसका निर्णय मेरी श्रद्धा पर है न कि सामाजिक दबाव अथच नरक की धमकी पर।

दू ने —जब माता पिता का मान मैंने राजाज्ञा से किया तब उसमें मेरी महत्ता क्या रह गई? यदि किसी को भिक्षु मात्र होने से गृहस्थ से अधिक आराम मिले तो कोई धनोपार्जन में व्यर्थ कष्ट क्यों करे? यदि गुरुजी ही की आज्ञा से लोगों के शरीर स्वस्थ रह सकें तो वैद्यक और स्वास्थ्य विभाग संसार से उठा ही दिये जायँ।

नृत—इन बातों के अतिरिक्त एक क्रूर विदेशी जाति हमारे ऊपर शासन कर रही है। अब तक खेतिहर लोग उपज का षष्ठांश मात्र कर में देते थे किन्तु अब लगान धान्य के स्थान पर धन के रूप में लेने का प्रयत्न है और उपज का चौथाई हुआ जाता है। यही हूणों का शासन है।

प ने —शासन क्या नर भक्षण है किन्तु बौद्धों के विचारों से क्रूर मिहिरकुल के लिये बीस अवतारों तक देव भोग तैयार है।

दू पुर —पर इन अत्याचारियों का सामना करने को प्रस्तुत है कौन ?

वृद्ध—इसी प्रश्न का उत्तर देने मैं आज आया हूँ। इसके लिये विष्णुवर्द्धन को सामने करके स्वयं महाराजा ईशान वमन तथा आप लोगों के कल तक के शासक पूज्य भ्राता धर्म दोष खड़े हुए हैं। क्या अब भी आप लोगों को कोई सन्देह शेष है ?

प ने —हम लोग आपके साथ जीने मरने को सदैव प्रस्तुत हैं।

प पुर —किन्तु आप एक वैश्य को क्या सम्राट बना रहे हैं ?

वृद्ध—इस बात पर आपको क्या ईशान वर्मन से भी अधिक क्षत्रियत्व का जोश है ? जब वे ही एक महाराजा होकर उनके अनुगामी बन हैं तब आप लोग ऐसी छोटी छोटी बातों पर क्या जाते हैं ? मैं पहले ही कह चुका हूँ कि व्यर्थ के जाति भेदों को बढ़ाने से हानि ही हानि सम्भव है। सभी भारतवासी एक और समान हैं।

दू पु —यह तो माना किन्तु वे स्वय क्यों नहीं नेता बनते ?

वृद्ध—नेता तो वे बने बनाये हैं किन्तु इतना सोचो कि सम्राट पद उनको काटता तो है नहीं जो उचित होता है वही किया जाता है।

ती पुर —अजी हम तुम इन ऊँची बातों पर क्या सोच सकते हैं ? (दोनों नेताओं की ओर इंगित करके) हमारे मालिक जो ठीक समझते हैं उससे भला हम बाहर हो सकते हैं

खास करके जब इस प्रारम्भ में महाराज धर्मदोष और स्वयं महाराजा ईशान धर्मन भी मौजूद हैं।

चौ पु —हम सब एक मत से आपके साथ हैं।

दद—तो आज यहीं उज्जयिनी से कार्यारम्भ हो। अत्याचार की भी हद हो गई है।

नाइ—(बटोहो की ओर इंगित करके) बेचारे इन्हीं की स्त्री छीनने के फिराक में यार लोग बैठे हैं।

बटो —मै तो सब के आगे युद्ध करूँगा। जान तक की मुझे परवा नहीं।

चौ पु —अजी आप हो पर क्या किस किस पर कौन कौन से अत्याचार नहीं हो रहे हैं ? सब लोग लड़ने को कटिबद्ध हैं।

प —तो चलो कार्यारम्भ हो।

दू ने —क्यों न भाइयो ! आप क्या कहते हैं ?

प ने —हम लोग एकदम नि संकोच प्रस्तुत हैं। आप लोगों के साथ सारी प्रजा है।

सब पुर —जै महाराजा यशोधर्मन की जै महाराजा ईशान धर्मन की जै महाराज धर्मघोष की।

पटाक्षेप

सातवाँ दृश्य

[स्थान कश्मीर की राजधानी मिहिरकुल का महल। मिहिरकुल और शेरशिकन का प्रवेश]

मि कुल—क्यों शेर भाई आजकल सल्तनत का हाल कुछ बिगडा हुआ नजर आता है।

शेरशिकन—गरीब परवर कुछ खराबियाँ जरूर हुई हैं लेकिन

महादेवजी की किरपा व हुजूर का यकबाल से सब ठीक हो जायगा।

मि कु —क्या कहूँ! मालवे में बगावत होकर वह पूरा सूबा निकल ही गया और उ र बालादित्य गुप्त खिरा न्ने से इनकार करने लगा है। उसका हौसला तो दखो कितना बढ़ गया है?

शे शि —मगर जिस दिन हुजर का इर्शाद होगा ज द कदर वाकियत मालूम हो जायेगा। दोनों मदू द है कितना कि शहशाहे आजम का मुकाबिला कर सकें?

मि कु —कहना तो तुम्हारा ठीक है मगर छोटा दुश्मन भी मामूली नहीं समझना चाहिये।

शे शि —बजा इर्शाद होता है खोन्दाव द! तो क्या हुक्म होता है?

मि कु०—बस दो ही चार दिनों में जे शंकर मचे। अब देर का क्या जरूरत है? भला पहले बंग चलना ठीक है या मालवे?

शे शि —मेरा राय में पहले बंग ही जाना दुरुस्त होगा। है तो दोनों अपना दुश्मन लेकिन आपस में मिल नहीं सकता क्योंकि उनमें मजहबी फर्क है।

मि कु —जरूर वालिद माजिद ने इन मदू द बौद्धों को खत्म ही कार्ना था लेकिन मैंने इन पर इनायत रक्खा इसी का नतीजा है कि मिजाज बहुत बढ़ा हुआ है।

शे शि —बेशक गरीबपरवर यही बात है मगर हुजर! मैं कुछ साफ साफ बात करने का मुआफी चाहता है। हुजूर ने बौद्धों पर जो मेहरबानी का बर्ताव रक्खा है वह तो समझ बूझ कर हुआ है।

मि कु —हां इसमें तो खुद तुम्हारी राय थी कि शहंशाह को हर जमात व मिल्लत से कम अज कम जाहिरा तौर से दोस्ताना बर्ताव रखना ही चाहिये। किसी एक को जियादा अपनाना ठीक नहीं।

शे शि —वर्ना एक कौम नाउम्मीद होकर मुम्किन है कि दूसरी से दब जावे और उनमें मेल होकर बिलआखिर सल्तनत पर पूरा दबाव पड़े।

मि कु —तो क्या हम उन दोनों को साथ साथ दबा नहीं सकता?

शे शि —क्यों नहीं खोदावन्द, मगर वह जितना कमजोर हो और आपस में ही लड़ता रहे उतना ही आसानी से दोनों दब सकैगा। इसी वक्त का गौर कर लिया जावे।

मि कु —यह तो ठीक है अगर जसोधमन और बालादित्य मिल जावें तो कुछ मुश्किल जरूर पड़ सकता है।

शे शि —इसीलिये तो जमाना साबिक से भी हिन्दुस्तान का फातेह शाहान मौके से गों गांठता रहा है। सच तो यह है कि जब से इस मुल्क में बोध मजहब जोर पड़ा तभी से आपस का निफाक ऐसा तेज हुआ कि बाहर वालों के पौ छके हैं।

मि कु —यह तो हमारा काम ही है कि दोनों में तफर्का डाले रहें। अगर दोनों बोध या हिन्दू हो जाता तो हिन्दुस्तानी लोग ही न हमारा वतन पर धावा मारता।

शे शि —अपना तरकीब यही है कि कभी एक का खातिर बढ़ा दिया और कभी दूसरा का जिससे दोनों एक दूसरे के खून का प्यासा बना रहै।

मि कु —बोधों का एक यह भी खास्सा है कि उनका थोड़ा मजहबी खातिर कर दिया जावे तो वह इस बात का

ख़याल ही नहीं करता कि गैर मुल्कवाला हमारा देस न रह है।

शे शि —इसीलिये तो इस मामला में हुजूर ने बड़ा हुजूर तक का पुराना तरीका छोड़ कर इन लोगों का खातिर पसंद फर्माया।

मि कु —फिर हिन्दू लोगों में ही कब आपसी मेल हो सकता है?

शे शि —क्यों होने लगा खोदावन्द! उनका तो चार खास जात है। उन्हीं में एक दूसर से खयाल नहीं मिलता। जो सुद्दर कहलाता है उनमें से कुछ फिर्का तो बढ़ गया है लेकिन दीगर का कद्र हिन्दू नहीं करता।

मि कु —इसीलिये तो दबा हुआ जात अपना कौमीतरक्की तक का परवा नहीं करता मुल्की अवाल बचाने को जान देने का बात दूर रहा।

शे शि —इधर बनिया का यह हाल है कि बस रोजगार चलता रहै। उसे मतलब नहीं कि मुल्क पर हुक्मरानी कौन करता है?

मि कु —कुशान शहंशाह कनिष्क ने सुद्दर लोग का बहुत ख़ातिर किया और ऊंचा अकवाम को खूब ही रगड़ा लेकिन चूंकि उसका जरीया से हिन्द का रोजगार रोम से खुला पस बनिया लोग हमेशा उसका तारीफ करता रहा।

शे शि —उन काफिरों को यह थोड़ा ही समझ पड़ता है कि बाहर वाला आकर हिन्द पर हुक्मरां है या कौम पर जुल्म करता है। सब को अपने अपने माड़े हलवे से काम।

मि० कु —ठाकुर लोग जरूर लड़ने को तैयार रहता है और बिरहमन भी इस काम में उनका मदद करता है मगर

खाना पीना शादी वगैरह आमतौर से इन दोनों में अब नहीं होता।

शे शि —इन्हीं वजूहात से तो इनमें भी जैसा चाहिये वैसा मेल नहीं है और न हो सकता है।

मि कु —मगर गुप्त राजाओं की सल्तनत में तो कुल बातों में तरक्की नमूदार था।

शे शि —था जरूर और जैसा कनिष्क के वक्त में मगरबी एशिया व रोम से हिंद का रोजगार खुला था वैसा ही गुप्तों ने मशरकी एशिया से खोला। फिर भी बिरहमन लोग उस काम में कब पड़ा?

मि कु —अजी उनके यहां रोजगार तो सिर्फ बनिये का काम है। बिरहमन को मजहबी कुतुब के तस्नीफ में लगाव रहना काफी है। वाकई इस हिंदू कौम को खुदा ने क्या ही बनाया है।

शे शि —हिन्दू लोग अपनी चारों दर्मियानी जातों को मिलाकर खाना पीना शादी रोजगार वगैरह में एक होगा नहीं। इसी से हम लोगों का मुकाबिला वह कभी न कर सकेगा। हमेशा आपस के झगड़ों में उलझा रहेगा। क्या मजा है!

मि कु —अजी बहुत अच्छा है महादेवजी हमेशा ऐसा ही रक्खे।

शे शि —और हुजर इस कौम में बच्चों की शादी भी बहुत कमसिनी में होने लगा है जिससे शख्सी ताकत की कमी जरूरी है।

मि कु —यह तो साफ ही है। कोई भी हिंदू एक के सामने एक आकर किसी हूण का मुकाबिला नहीं कर सकता।

शे शि इसमें तो हुजर कुछ हमारा वतन का आबोहवा का भी असर हो सकता है।

मि कु —क्यों नहीं एक तो हमारा आबोहवा अच्छा है दूसरे अपना बुजुर्ग लोग एक जगह पर न रह कर ज्यादातर फिरता रहता था। इसीलिये हमारा जिस्मानी ताकत काफी है।

शे शि —ऐसा न होता तो क्या यों ही हम लोग सारा योरोप और मगरबी एशिया फतह कर लेता?

मि कु —मगर इस वक्त मेरा दिल में कुछ शक पैदा हुआ है। कहने को तो शाक्ल स तनत सागल में है मगर हम लोग आबोहवा के खयाल से याद तर कश्मीर में रहता है। इससे हिन्द में मुकामी ताकत का कमी पड़ जाता है। इतना दूर से इन्तिज़ाम ठीक कैसे बने?

शे शि —हुजर को ऐसा छोटा बात पर फिक्र वाजिब नहीं है। मैं तो समझता हूँ कि आनन फानन में सारा दुश्मन पामाल होगा।

मि कु —जरूर तुम लोगों का बहादुरी से ऐसा ही उम्मीद है।

(प्रतीहारी का प्रवेश)

प्रती —हुजरेवाला! कविराज आया है।

मि कु —अच्छा उसे हाजिर करे। (प्रतीहारी का प्रस्थान कविराज का प्रवेश)

कवि —जय हो सम्राट की। आज दरबार नहीं लगा है। क्या मैं किसी सलाह में बाधक तो नहीं हो गया हूँ?

शे शि —नहीं नहीं आप तो हुक्म लेकर आया है। मगर हुजूर (बादशाह से) खता मुआफ यह वक्त तो मैनोशी व रक्सो सरोद का है।

मि कु —जब से मालवा में बागियों की कामयाबी का हाल सुना है इन बातों में जी कम लगता है; मगर कहना तुम्हारा ठीक है मुफ्त की हैरानी क्यों किया जावे ? इन्तिजाम एक चीज है और वह होवैहीगा मगर दीगर इन्सानी जरूरियात भी बन्द कैसे हो सकता है ?

क रा —बहुत उचित आज्ञा होती है।

शे शि —तो मोतीजान का तायफा हाजिर किया जावे ! बहुत दूर से हुजूर का नाम सुन कर आया है।

मि कु —दुरुस्त है। (कुछ उच्च स्वर से) अरे कौन है !

(प्रतीहारी का प्रवेश)

प्रती —हुक्म खोदावन्द !

मि कु —अभी कुर्सियाँ बिछाया जावें। मोतीजान का तायफा भी भेजें।

प्रती —जो इर्शाद (प्रतीहारी का प्रस्थान दो सेवक एक अच्छी और दो साधारण कुर्सियाँ बिछाते हैं। उन पर तीनों बैठते हैं। साजिन्दों के साथ मोतीजान का प्रवेश)

मोती —बड़ा नवाजिश हुआ खोदावन्द !

शे शि —हुजूर का हुक्म है कि आप कोई अच्छा गाना सुनावें।

मो जा —जो मर्जी। (गाती है साजिन्दे वाद्य बजाते हैं)।

नैना नट नागर सक नाहीं।
उलटि पलटि कै कला दिखावैं मुरकि छिनक में जाहीं ॥ नैना नट
बरबस मन मोहत है मानों प्रकटि धूप औ छाहीं।
सित अरुअसित रंग मिसि सब के हरत न चित सकुचाहीं ॥ नैना नट

मि कु बहुत ही अच्छा गाया। ऐसा ही एक और सुनावें।

मोती —(सलाम करके) बड़ी क़द्रदानी हुई खोदावन्द नेमत !
(फिर गाती है।)

नैना तेरे चतुर चलाक।

निरखत हिया हरत हठि मेरो प्रकटि नेह छबि छाक ॥ नैना तेरे
चितवत धीर सकै नरि को नहिं मानत इनकी धाक।
चित चक्कर में परत तुरन्तहिं ह्वै कुम्हार को चाक ॥ नैना तेरे

मि कु —अच्छा तुम लोग जा सकता है हम बहुत खुश हुआ। (तायफा व साजिन्दों का सलाम करके प्रस्थान) कविराज ! अब आप भी कुछ सुनावें।

शे शि —कोई नया तस्नीफ पढ़ने का मेहरबानी करें।

क रा —अभी परसों हाथियों की लड़ाई में नये छन्द सुना चुका हूँ।

मि कु —उस दिन भी क्या ही अच्छा लुत्फ आया।

शे शि —क्या कहना है खोदावन्द ! जो हाथी ऊंचा पहाड़ से गिराया गया था उसका मजा बिलकुल काबिलदीद था।

मि कु —क्या ही ढुलकता हुआ गिरा था। दूर तक चला गया। सारा जिस्म पाश पाश हो गया। खब लुत्फ आया।

क रा —किन्तु अन्नदाता ! एक मजबूत हाथी मुफ्त में खराब ही तो हुआ। बहुत लोग इसके विरुद्ध भी हैं।

शे शि —आप भी शहंशाह का शायर होकर क्या पोच बात कहता है ? हुजर के मजे का आगे एक हाथी क्या शै है ? ऐसे ऐसे सौ दो सै हाथी ऊंट वगैरह ढकेला जा चुका होगा। यह बादशाहों का काम ही है।

मि कु —नहीं यह कविराज बेचारा बिरहमन है इसका कलेजा में इतना हिम्मत नहीं आ सकता कि ऐसा उम्दा तमाशा पसन्द कर सके। अच्छा कविराज अब तुम अपना अशआर पढ़े।

क रा —जो आज्ञा। पवन पर कुछ छप्पय आदि आज ही कल मैं रचे हैं उन्हीं को पढ़ता हूँ।

मि कु —ज़रूर पढ़ें।

क रा —सीतल मन्द सुगन्ध युत चलि जग ताप नसाय।
मारुत सब संसार का रहत सदा सुख दाय॥
रहत सदा सुखदाय फूल विकसावन वारो।
कलिकन को मुख चूमि चित्त उमगावन वारो॥
बनन वाटिकन बीच बनो नायक सो डोलत।
हास विलास बढ़ाय कलिन में सविधि कलोलत॥ १॥
मंजुल गति उरि सविधि समुद नव कोपल चूमै।
विकसावन के हेत कलिन के मुख निन चूमै॥
डारन डारन परसि तिहै बहु भाँति झुलावै।
बनो तरुन को सखा सबन व्यायाम करावै॥
कहुँ कोमल पुनि कहुँ तीव्र गति धारि ताप सबके हरै।
बन बागन में डोलत मरुत विविध भाँति कौतुक करै॥ २॥
सिन्धु तरंगनि परसि लवण जुत जल कण धारै।
मरमर शब्द मचाय तालवन बीच बिहारै॥
एला चन्दन युत लवंग आदिक बन देखै।
तिनकी धारि सुगन्ध जगत हित चित अवरेखै॥
पुनि बनो मेघ वाहन मरुत सबको हित साधन करै।
यों कलरव नादहु गान को रसिक जनन हित सञ्चरै॥ ३॥

शे शि —शाबाश कविराजा बहुत बढ़िया शायरी है मगर कोई चुहचुहाता हुआ भी मज़मून सुनावें।

क रा —जो आज्ञा पवन ही का बयान है।

सुरभि समागत समुझि सकल थल सोर मचावै।
पूरि भवर गुंजार चहूँ दिसि हिय हुलसावै॥

क रा — मदिरा जा पै निन्द्य ठहरती।
तौ याको धारन करि चंडी चड रूप क्यों धरती? ॥ मदिरा जो०
गज गर्ज छिन मूढ़ भाखि क्यों महिषासुर संहरती?
बढ़ि एकन ते एक दानवन खंड खंड कस करती ॥ मदिरा जो०
बाममार्ग जे याहि बखानैं तिनकी सुधिबुधि हरती।
साथ चक्र पूजन ह्वै लै मति बक्र गतिन सों रती ॥ मदिरा जो०
मि कु —खब।

(नाचते गाते हुए सबका प्रस्थान। पटोत्तोलन)

आठवाँ दृश्य

[स्थान पाटलिपुत्र। गुप्त सम्राट् का दरबार]

(बालादित्य गुप्त सिंहासनासीन हैं। मन्त्री धर्मदेव युवराज प्रकटादित्य कविराज तथा सेनापति वीरसेन बैठे हैं परिचारक लोग यथास्थान खड़े हैं।)

क रा —आज इस सिंहासन हमारे विजयी सम्राट तथा साम्राज्य तीनों की शोभा है।

धर्म देव—अवश्य आज भगवान बुद्धदेव ने वह दिन दिखलाया है जिसके लिये हम लोग सत्रह वर्षों से लालायित थे।

यु प्र —कहिये वीरसेनजी यदि पिताजी उस दिन आपको वीरगति पाने से रोक न लेते तो क्या आज का मांगलिक दिन आपके देखने में आता?

वीरसेन—दीनबन्धु कैसे आता? मैंने उस दिन स्वामी के अगाध रण कौशल का परिचय न पाया था। स्वामी ही ऐसे कृपालु थे जिन्होंने धृष्टता क्षमा कर दी।

बाला —अब हमें उसका स्मरण क्या दिखाते हो? हूणों पर विजय भी किसके बाहुबल से प्राप्त हुई है?

धी से —सम्राट् मुझे लज्जित क्यों करते हैं ? दो महीनों तक स्वयं सैन्य संचालन करके श्रीमान् ही ने हूणों की सारी सेना बगाली नदियों और झीलों के चक्कर में ऐसी फसाई कि वह आधी से अधिक कट गई और शेष को आत्म समर्पण ही करते बना। मैं उस दिन सम्राट स्कन्दगुप्त के लिये रोता था यह न ज्ञात था कि वैसे ही शूरशिरोमणि अब भी हमारे स्वामी हैं।

ध० दे —अवश्य हमारे पूज्य महाराज ने दूसरे स्कन्दगुप्त होकर दिखला दिया। जिस दिन हम लोगों ने मालवा छोड़ा था तब किसे ध्यान था कि मगध के फिर दर्शन होंगे ?

यु प्र —बड़े ही हर्ष का दिन है कि अवलोकितेश्वर ने वह घड़ी दिखलाई कि सोलहवें वर्ष फिर गुप्त सिंहासन पाटलिपुत्र के सभाभवन में सुशोभित हुआ।

बाला —मैंने तो सचमुच यही समझा था कि संवत् १२ हमारे लिये कालान्तक हो गया किन्तु दैव को दूसरा ही खेल दिखलाना था।

ध दे —अब मिहिरकुल के विषय में क्या आज्ञा होती है ?

यु प्र —मैं तो समझता हूँ कि विजयोत्सव सम्बन्धी नृत्यगान हो लेने के अनन्तर कामकाज की बातों पर विचार हो।

बाला —नहीं भैया पहले विजय सम्बन्धी सभी कृत्य पूरे हो जावें तब फिर आमोद प्रमोद हो। इसके लिये बहुत समय मिलेगा क्यों न धर्मदेव ?

ध दे —अन्नदाता बहुत ही उचित आज्ञा होती है। अच्छा दैव ने वह दिन दिखलाया कि जो अपने को भारत का सम्राट समझता था और जिसके दरबार में मुझे हाथ जोड़कर बिनतियाँ करनी पड़ती थीं वही आज सपरिवार और ससचिव अपने कारागार की शोभा बढ़ा रहा है।

वी से —अब आ फिर उसके विषय में योग्य क्या है ?

ध दे —मै तो समझता हूँ कि या तो आजीवन कारागार में रहे या यमलोक का यात्री बनाया जावे ।

यु प्र —यदि यही न्याय हो तो उसी के पिता तोरमाण ने पकडने पर मुझे क्यों छोड दिया ?

ध दे —वह चाल दूसरी थी । उसने आपके साथ कोई कृपा नहीं की थी वरन पिता पुत्र को आपस में लड़ाकर वह सारा देश हडपना चाहता था ।

बाला —कहना तो आपका यथेष्ट है कि तु युद्ध में भले ही मार डाला जाता पकडा जाकर शत्रु भी अवध्य है ।

यु प्र —यही उदारता सम्राट की महत्ता भी प्रक करेगी ।

ध० दे —तो फिर उससे उचित सन्धि करनी होगी ।

बाला —उसका मन्त्री शायद आया भी है ।

यु प्र —दर्शनों के लिये याचना भी कर चुका है ।

बाला —तब वह बोलाया जावे ।

ध दे —(एक परिचारक से) जाओ शेरशिकन को ले आओ ।

(परिचारक बाहर जाकर मन्त्री शेरशिकन के साथ लौट आता है)

यु प्र —आइये शेरशिकनजी ! विराजिये यह आसन है ।

(शेरशिकन सम्राट को कोनिश करके बैठता है)

बाला —कहिये मन्त्री जी आपके स्वामी मजे में तो हैं ?

शे शि —हुजर का मेहरबानी से निहायत आराम में है ।

ध० दे —हमारे सम्राट एक दिन उनसे बातचीत करनी चाहते हैं ।

शे शि —(हाथ जोड़कर) इसका लिये वह मुआफी चाहता है ।

बाला —आखिर क्यों क्या मैं उनकी कोई मान हानि करूगा ?

शे शि —हुजर चाहे उसका गर्दन तक उड़ा देवे मगर कैदी का

सूरत में जिन्दा वह सामने न आवेगा। हुजूर उसका लाश देख सकता है मगर जिन्दा मिहिरकुल को नहीं।

धी से —इतना अहंकार।

ध० दे —यह अहंकार नहीं लज्जा है। मूल में है गर्व ही किन्तु मैं समझता हूँ कि सम्राट को उनके सामने लाये जाने का हठ न करना चाहिये। प्रयोजन तो सन्धि की उचित धाराओं से है।

बाला —जितने दिन इस राज्य से उनका कर मिला उतने दिनों भी उन्होंने हमारे किसी कर्मचारी तक का अपमान नहीं किया न हमारे ऊपर बंग में कोई अनुचित दबाव डालने का प्रयत्न हुआ।

शे० शि —यही बात है गरीब परवर!

बाला —जिसने हमारे साथ भलमन्सी का व्यवहार किया उसके साथ हमें भी सौजन्य ही योग्य है।

शे शि —समराज बडा उलुलअज्मी का बात बोलता है। हमारा मालिक हुजर का बर्ताव व दरियादिली से बहुत मश्कूर है।

ध दे —तो अब सन्धि की धाराओं पर विचार हो।

शे शि —जैसी मर्जी।

ध दे —सम्राट की यह आज्ञा है कि आपका शहंशाह कश्मीर भर में राज करें और सारा मध्य पश्चिमी और उत्तरी भारत पंजाब पर्यन्त साम्राज्य में रहेगा।

शे शि —पंजाब भी क्या गुप्त स तनन में आवेगा?

ध दे —अवश्य।

शे शि०—सम्राट फिर गौर कर लेवें शरायत सख्त है।

ध दे —मालवा तो आपके पास बाकी है नहीं और पंजाब में

आधापर्धा अधिकार यशोधममन का है। आपका जाता ही क्या है?

शे शि —मालवा और पंजाब तो हम जाग चुटकी बजाते ले लेवेगा।

बाला —मुझे तो सन्देह है। अभी आप महाराजा ईशान वर्मन के पराक्रम से अनभिज्ञ हैं। जब उनके दल से सामना पड़ेगा तब हाल मालूम होगा।

शे शि —शायद ऐसा भी हो मुझे तो शक है।

ध दे —अच्छा फिर अपनी बात कहिये।

शे शि —बहतर है हमारा मालिक आपका शर्त मंजूर करता है।

ध दे —क्या आप उनसे आज्ञा प्राप्त कर चुके हैं?

शे शि —सुलहनामा पर पञ्जा उनका लगेगा। उनका जानिब से शरायत मंजूर मैं करता है।

बाला —बहुत ठीक है अब आप जा सकते हैं।

(शेरशिकन कोर्निश करके जाता है)

ध दे —सन्धि तो अच्छी हो रही है।

यु म —क्यों नहीं?

वी से —इस महती विजय के स्मरणार्थ कोई स्तूप बनना क्या ठीक न होगा?

बाला —यही तो मैं कहने वाला था। नालन्द में महामन्दिर बने और उसमें स्मरणार्थ लेख भी अंकित हो।

ध दे —सम्राट के योग्य मन्दिर दो साल में तैयार हो सकेगा।

बाला —क्या हर्ज है?

वी से —आज का दिन बड़ा धन्य है कि गुप्त साम्राज्य फिर से

सारे मध्य पाश्चात्य और उत्तरी भारत में स्थापित हो रहा है।

यु प्र —सो भी शत्रु स्वीकृत संधि पत्र द्वारा।

राजा —अब नृत्यगान का भी कुछ स्वांग हो जावे क्योंकि इसके बिना बहुतरे लोग दरबार को सूना मानते हैं।

यु प्र —पिता जी गायिकायें मंगलामुखी तो कहलाती ही हैं।

राजा —मैं तो भाई केवल दो गाने सुनकर तथा सभा समाप्त करके विजयामनाने को मठ में पूजन करूंगा। तुम लोग अन्य आमोद प्रमोद में लगना।

यु प्र —विजय जैसी भारी मिली है उसके देखते एक मास पर्यन्त आमोद प्रमोद हो पाटलिपुत्र में मिठाई बटे भिक्षुओं अन्य धार्मिक जनों साधारण गृहस्थों आदि को प्रसाद मिले और सारे मठों तथा नगर में रोशनी हो ऐसी मेरी प्रार्थना है।

राजा —यह सब योग्य ही है लेकिन प्रमोदाधिक्य निजू प्रकार से मुझे पसन्द नहीं है। फिर भी समय के देखते यह भी स्वीकार करता हूँ।

यु प्र —बड़ी कृपा हुई (मंत्री से) अब गायिकायें बोलाइये।

ध दे —जो आज्ञा। (एक परिचारक से) जाओ गायिकाओं को ले आओ।

(परिचारक बाहर जाकर साजिन्दों सहित गायिकाओं के साथ पलटता है। मुख्य गायिका बढ़कर प्रणाम करती है)

यु प्र —समयानुसार गाना सम्राट को सुनाओ।

गायिका—अहो भाग्य कि आज इस दरबार में मेरी सुध तो ली गई।

(साज़िन्दे बजाते हैं और गायिका गाती है)

जयति जय बालादित्य भुआल।
तो परताप सबै दिसि छायो मिटे सोक भ्रम जाल॥ जयति०
गुप्तबस अवतंस देस की राखी लाज कृपाल।
हूणन सों लरि सबिधि दिखाई राजनीति की चाल॥ जयति०
यदि बनि सूर सबै कटि जाते राखन मालव हाल।
तौ को राखि सकत भारत कहँ बैठि नेस बंगाल॥ जयति०
तो दरसित पथ भारतबासी जो धरिहैं सब काल।
तौ वे सदा सफल बनि सकिहैं रहिहैं नित्य निहाल॥ जयति

धी से—कविराजजी अब कुछ अपनी सुनाइये।

क रा—जो आज्ञा। (पढ़ता है) बालरवि उदै होत सब जग काज साधै ताही सम तुमहूँ जगत हित कीन्हों है। छिन छिन तासु परताप ज्यों बढ़त जात रावरो प्रताप त्यों सकल जग चीन्हों है। कौल कोक सोक हर यह उत आहिर भो तुम साधुगन सोक त्यों ही हर लीन्हों है। याही ते तिहारो नाम बालादित्य भाखै जग दोउन के गुन बिधि सम कर दीन्हों है।

पटाक्षेप

दूसरा अंक

प्रथम दृश्य

[स्थान पाटलिपुत्र। सम्राट् बालादित्य गुप्त का अन्तरंग सभाभवन। बालादित्य और ईशान वमन का प्रवेश]

बाला —कहिये कृपासिन्धु क्या अब भी मुझे पहचानते हैं ?

ई व —स्मरण तो कुछ ऐसा ही पड़ता है।

बाला —फिर आज ही कैसे कृपा की ?

ई व —आज्ञा के मान रक्षणार्थ।

बाला —अब तक कहाँ थे ?

ई व —आमणी चक्र में।

बाला —यदि बोला न भेजता ?

ई व —तो क्यों कष्ट देता ?

बाला —आखिर मैं आपका कोई हूँ ?

ई व —हैं तो आप ज्येष्ठ बन्धु यथासम्भव पितृतुल्य पूज्य।

बाला —वह पूजा तो आप कर ही रहे होंगे ?

ई व —दुख है कि इधर कई वर्षों से नहीं कर पाया हूँ।

बाला —आखिर कुछ कारण भी होगा ही ?

ई व —कारण है विचार पार्थक्य।

बाला —तो क्या भ्रातृभाव केवल विचारों पर अवलंबित होता है ?

ई व —नहीं वह तो सहज है।

बाला —फिर ?

ई व —संसार में धर्म सभी के परे है।

बाला —मैं तो धर्महीन हूँ।

ई व —आपका धर्म शारीरिक है और मेरा देशीय। अपने धर्म में आप मुझ से बढ़े हुए हैं।

बाला —ईशान! तुम्हारी कार्यवाही मेरी समझ में नहीं आती।

ई व —यह मेरा दुर्भाग्य है।

बाला —आख़िर तुम्हारे स्वामी महाशय हैं कौन?

ई व —उनका शुभ नाम है वैश्यवंशावतंस राजाधिराज परमेश्वर विष्णु वर्द्धन विक्रमादित्य।

बाला —ऐसा! उनके पूज्य पिता पितामहादि भी कदाचित् वैसे ही होंगे।

ई व —जी नहीं वे आत्मवंशी हैं। पूर्वजों के नाम पर उनकी महत्ता अवलंबित नहीं है।

बाला —आपने तो किसी विक्रमादित्य का नाम अब तक सुना न होगा?

ई व —सुना क्यों नहीं। मेरे मातृवंशी पूर्वपुरुष सम्राट श्रेष्ठ दूसरे चन्द्रगुप्त स्वयं विक्रमादित्य थे।

बाला —उनकी इस कथन मात्र की उपाधि के लिये शायद आप लज्जित होंगे।

ई व —मुझे तो उस पर पूरा गर्व है।

बाला —यदि ऐसा होता तो क्या आप एक नौबढ़िये बनिये को अपने पूर्वपुरुष की उपाधि से विभूषित करते?

ई व —उपाधि तो गुणों के पीछे चलती है। सारे गुणी भारतीय पूज्य हैं। इसमें वैश्य क्षत्रिय या शूद्र पर क्या है?

बाला —यदि आप स्वयं सम्राट बनने के प्रयत्न में होते तो भी मैं इस कार्यवाही पर कुछ संतोष पाता किंतु आपने तो गुप्त और मौखरि दोनों वंशों को तिलांजलि देकर एक अति साधारण मनुष्य को बढ़ाया है। क्या उसके अनुगामी होने में आपको तनिक भी लज्जा नहीं लगती?

ई व —मुझे तो ऐसे आत्मवशी गुणी पुरुष के अनुगामी होने का अभिमान है। जो अपने गुणों से बढ़े वही वास्तव में पूज्य है और अपने यहाँ तो ऐसा ही होता भी आया है।

बाला —यह तो कहने की बातें हैं।

ई व —है तो स॒य तो भी मान लीजिये कि कहने भर की है अच्छा आप ही आज्ञा कीजिय कि मै करता क्या ? हूणों से भारतोद्धार का प्रश्न बड़ा था या जाति भेद की कल्पित बड़ाई होगाई ? क्या भीष्मपितामह ने शान्तिपर्व में आज्ञा नहीं दी है कि यदि एक शूद्र तक विदेशियों से भारतोद्धार करे तो उसका भी रा॒य सभी भद्रपुरुषों द्वारा समर्थनीय है ? इस मत में कैसा उद्दाम देश प्रेम कथित है ?

बाला —शायद कोई योग्य क्षत्रिय भूपाल भारत में शेष न था।

ई व —थे तो स्वय आप ही। क्या मैने इस बात के लिये आपसे विशेष विनय और हठ के साथ प्रार्थना नहीं की थी ?

बाला —तो मैने कब आयुध डाल दिये थे ?

ई० व०—विजय के समर्थक समुचित अथच आवश्यक साधनों का छोड़ना कृपाण फेंक देने के ही बराबर है।

बाला —यदि महायानीय महामत मुझे उचित अथवा अनुचित कारणों से योग्य जचा तो मै उसे कैसे छोड़ देता ?

ई व —क्षमा प्रदान हो यदि उसे न छोड़ते तो रा॒य छोड़कर किसी भिक्षुसन्न में प्रवेश करते। दुइ न होय यक सग भुवालू हसब ठठाय फुलाउब गालू। प्रजा यहाँ तीन चौथाई से अधिक हि दू है। आप उसके अपने न रहे। जब वह आपके लिये मरने मारने को तैयार नहीं है तब आपका साम्रा॒य कितने दिन चल सकता था और कब चला ?

बाला —यह बात तो हूणों के तत्कालीन असह्य बल के कारण हुई न कि प्रजा की उदासीनता से। थी कुछ उदासीनता भी अवश्य किन्तु मुख्य कारण हुआ प्राबल्य था।

ई व —हूणों की इससे भी बड़ी शक्ति पूज्य बड़े नाना स्कन्दगुप्त से कैसे पराजित हो गई?

बाला —उनकी भी शक्ति महती थी।

ई व —आपकी क्यों कम हो गई?

बाला —जानते तो हो कि ऐसा केवल गृह विच्छेद से हुआ।

ई व —किन्तु वह विश्लेषण ही क्यों हुआ?

बाला —क्षमा करना ऐसा हुआ था काकाजी की स्वार्थपरता से।

ई व —क्या वास्तव में कुटुम्ब पर यह लाञ्छन लग सकता है? क्या ऐसा कथन आप जैसे महात्मा को शोभा देता है? काकाजी स्वार्थी थे नहीं और होते भी तो बिना धार्मिक वैमनस्य के सेना में हलचल न मचती और उन्हें विश्लेषण के समर्थन में साधन अप्राप्त रहता।

बाला —इसमें मतभेद सम्भव है। यदि आप उनके सगे न होते तो शायद ऐसा न कहते।

ई व —भला दादा जी! मैं क्या आपका सगा नहीं हूँ? हम लोग तो दोनों शाखाओं को पुश्तों से बराबर समझते आये हैं। एक ही पीढ़ी का तो बीच है। क्या हम लोगों को मागध गुप्त नहीं मानते आये हैं? हम लोगों ने थोड़ा भी अन्तर कब माना?

बाला —ठीक है मानते बराबर आप लोग अवश्य रहे हैं। विश्लेषण में भी आप लोगों का हाथ न था।

ई व —आप ही समझिये।

बाला —अच्छा उन्हें सहायता क्यों मिली?

ई व —यशोवर्द्धन को ही सहायता कैसे मिल गई ?

बाला —तुम्हारी और धमदोष की उलटी मति से। यदि तुम लोग धर्मान्धता न दिखलाते तो गुप्तवश कभी न गिरता। अब भी कुछ नहीं हुआ है समझने का समय अब तक शेष है।

ई व —आपको विश्वास न आवेगा किन्तु यदि बौद्ध होने में विजय की सम्भावना देखता तो मैं स्वय आज यही मत ग्रहण कर लेता। मेरा धर्म न हिन्दू है न बौद्ध मैं तो स्वदेश प्रेमी हूँ।

बाला —फिर आपका धर्म है क्या ? सभी बातों में आपका सा वैद्य कोइ कैसे हो जावे ?

ई व —कहा तो कि देश प्रेम। वैद्य तो मैं बना बनाया हूँ।

बाला —तो स्वय सम्राट होने के प्रयत्न में क्यों न लगे उस बनिये के अनुगामी क्यो बने ? क्या बड़े फूफा जी और चाचा जी महाराजा न थे ?

ई व —मुझे भी महाराजा आदित्य वमन के पौत्र और महाराजा ईश्वर वमन के पुत्र होने का कम गर्व नहीं है पर आपकी बातों में एक बात बहुत खटकती है कि आप बार बार क्षत्रिय और वैश्य पर बहुत जोर देते हैं ! कृपया स्मरण रखिये कि ऐसे संकीर्ण भाव हिंदुओं में बहुत थोड़े ही दिनों से घुस आये हैं और यदि विचारशील लोग इनका शीघ्र ही पूर्ण बहिष्कार न कर देगे तो इनकी जड़ सुदृढ़ होकर थोड़ी शताब्दियों में भारत की राष्ट्रीयता हजारों वर्षों के लिये छिन्न भिन्न हो जायगी। इस पर भी ध्यान रखिये कि स्वय बुद्धदेव ने जाति भेद को निन्द्य ठहराया है। मैंने अपने लिये सम्राट् होने का डौल यों न डाला कि मेरे प्रयत्नों में साधन का अभाव होता।

बाला —क्यों ?

ई घ —पंजाब पर मेरा कोइ प्रभाव न था और ऊपर से कोषा भाव था।

बाला —उसका भी तो कन्नौज प्रा त और मध्यभारत पर प्रभाव न था।

ई घ —पर बिना सम्रा होने के लालच के वे हमारी गोष्ठी में कभी सम्मिलित न होते।

बाला —और तुम ?

ई घ —मेरे लिये तो भारतोद्धार ही सब से बड़ा व्रत है।

बाला —तुम्हारे स्वार्थ याग की मै शतमुख से प्रशंसा करता हूँ किन्तु क्या महाचीन में बौद्ध साम्रा य नहीं चल रहा है ?

ई घ —वहाँ सारी प्रजा बौद्ध है सो कोई धार्मिक प्रश्न राजनीति में शैथिल्य नहीं उपस्थित करता।

बाला —भारत में ही अशोक कनिष्क हुविष्क आदि प्रबल बौद्ध सम्राट हो गये हैं।

ई घ —सच्ची बात यों है कि अशोक और हुविष्क ने तो बने बनाये साम्राज्य चौपट भर किये। उनकी धार्मिक महत्ता की मै अवश्य प्रशंसा करता हूँ किन्तु उसका राजनीतिक फल सा उलटा हुआ सो सभी आंख वाले ेख रहे हैं। रहे कनि क सो उनकी महत्ता भारतीय बल पर अवलंबित न होकर कुशानों पर थी।

बाला —साम्रा यों का तो पतनोत्थान संसार में हुआ ही करता है। क्या शग साम्रा य नहीं ढ्गा ?

ई घ —शुग ढ्गे सीनियनों की बढ़ी हुई शक्ति के कारण किन्तु मौय और कुशान गिरे अपनी ही बलहीनता से।

बाला —अच्छा नवन द्वश क्यों बिगड़ा ?

ई व —वह जारजपन और स्वामिविद्रोह के घोर पातकों से घृणास्पद था। महापद्म का मन्त्रियों से बिगाड लोकमत की प्रतिकूलता से ही हुआ।

बाला —मै कहता हूँ कि आज भी तो हूणों को जीते हुए बैठा हूँ। क्या अब भी गुप्त साम्राज्य का पुन स्थापन न हो सकेगा? यह तो गृह विश्लेषण का प्रश्न नहीं है कि आप किसी के प्रतिकूल युद्ध करना उचित न समझें। खड़े भर हो जाओ फिर मजा देखो।

ई व —मुझे तो सन्देह है। शूर शिरोमणि बड़े नाना स्कन्दगुप्त जी ने हूणों को एक भारी युद्ध में करारी पराजय अवश्य दी थी किन्तु उनके से प्रचंड शूर और नेता को भी १२ वर्ष पर्यन्त युद्ध करना पड़ा था तब जाकर हूण दबे। फिर भी गुप्त वश में गृह विश्लेषण होते ही तोरमाण आ धमका और तत्पुत्र मिहिरकुल ने १५ वर्ष पर्यन्त देश में साम्रा य स्थापन एव अ याचार कर ही लिया। यदि मैं धर्मदोष की सहायता लेकर यशोधर्मन को मालवे में स्थापित न कर पाता तो हूणों का बल जैसे का तैसा रहता।

बाला —मै गव तो नहीं करता कि तु इसमें मतभेद सम्भव है।

ई व —अच्छा मान लिया कि आप उसके पूरे बल को भी बग में चूर्ण कर सकते किन्तु बंग के बाहर कैसी बीतती?

बाला —यदि तुम्हारी और धमदोष की सहायता मिलती तो मै वहाँ से भी उसे मार भगाता।

ई व —मेरा और धमदोष का मालवे में प्रभाव ही क्या था जो आपको उससे लाभ पहुँचता? जब तक प्रजा के अपने बनकर हम लोग खड़े न होते और पजाब कन्नौज तथा

मध्य भारत में धार्मिक जोश एवं प्रचुर कोष की सहायता न मिलती तब तक हमारा किया क्या होता ?

बाला —अब क्या आशाय हैं ?

ईश्व —अब भी आशंका अशेष नहीं है। जब तक पंजाब और कश्मीर में घुसकर हूण बल समाप्त न करेंगे तब तक वह किसी दिन मगध, मालवे और बंगाल को भी निगल सकता है। अभी यही तीन प्रान्त तो मुक्त हैं। शेष भारत में हूण बल बहुत करके जैसे का तैसा है।

बाला —तो क्या मिहिरकुल को छोड़ देने में मैंने भूल की ? सन्धि क्या टूट ही जावेगी ?

ईश्व —भूल क्यों की ? यदि वह मार दिया जाता या बन्दी बना रहता तो भी उसका उत्तराधिकारी वही प्रयत्न करता। अभी हूण शक्ति अशेष कहाँ है ? सन्धि के अनुसार पंजाब तक आपका अधिकार हुआ ही कब ? तीन साल के भीतर आप मगध से आगे कहाँ बढ़ सके ?

बाला —हाँ मिहिर उद्धत तो फिर है।

ईश्व —आज दिन भारत में तीन मुख्य शक्तियाँ हैं देखें अन्त में कौन प्रबल पड़ती है ?

बाला —जब ऐसे विचार थे तब मालवे से आप लोगों ने मुझ पर दबाव क्यों न डाला ? साम्राज्य पतन तो होता ही।

ईश्व —फिर भी आप ज्येष्ठबन्धु अथच भारतीय थे। दो राज्यों में से अन्यायी पर विजय का प्रयत्न योग्य भी था।

बाला —इस काल आप लोग क्या करेंगे ?

ईश्व —हूण पराभव।

बाला —सम्राट् कौन होगा ?

ईश्व —सो तो प्रकट ही है।

बाला —अर्थात् यशोवर्द्धन ?

ई व —अवश्य।

बाला —क्या गुप्त आपके कोइ नहीं हैं?

ई व —मेरे तो सब कुछ हैं कि तु वे वंश के अपने न रहे। इसी महावंश ने शकों को मि ाकर भारत में सत्ययुग सा फैलाया इसी की छत्र छाया में संस्कृत साहित्य और हि दू धर्म की अपूर्व उन्नति हुई इसी ने एक बार हूणों से भारत का छु कारा किया इसी ने प्राच्य एशिया में भारतीय यापार एवं प्रभाव बढ़ाया और इसी के समय का फाहियेन आदि विदेशियों ने यशगान किया कि तु यही अब प्रजा का अपना नहीं रहा सो इसके लिये कोई मरने मारने को प्रस्तुत नहीं है।

बाला —केवल धार्मिक भेद से?

ई व —मूल वही है कि तु शाखायें अनन्त या तो प्रजा के अपने बनिये या उसे पूर्ण दास बनाइये।

बाला —तीसरा कोइ उपाय नहीं?

ई व —क्यो होने लगा? बुरे दिन पर सम्राट प्रथम बालादि य ने बौद्ध मत अपनाया बुरी घड़ी पर दूसरे कुमारगुप्त पू य नानाजी और पू य मामाजी ने इसे छो ने से इन्कार किया तथा बुरी घड़ी पर आपने भी मेरी विनती को अमा य करके अपने पैत्रिक साम्राज्य पद को ठुकराया।

बाला —तो क्या अब कोइ आशा शेष नहीं है?

ई व —है अब भी यदि आप कुहठ छोड़कर प्रजा से अपनपौ उ पन्न कीजिये। गुप्त नाम में वह जादू है कि कोई इस महावंश का सामना नहीं कर सकता कि तु बौद्धगुप्त में नहीं। समझ लीजिये आप अपने हठ का कितना बड़ा मू य दे रहे हैं। दास प्रजा राजभक्त नहीं हुआ करती। मै अब भी आपका सहायक बनने को प्रस्तुत हूँ।

बाला —धन्यवाद! किन्तु क्या बौद्धमत हिन्दुओं का शत्रु है?

ईश्वर —है तो वह सनातनधर्म का एक अंगमात्र किन्तु शेष अंगों की निन्दा अनुचित तीव्रता से करता है। फिर वह स्वदेश रक्षक भारतीयों की केवल मतभेद के कारण घोर निन्दा अथच अन्यायी एवं देशशत्रु विदेशियों की उसी कारण से अनुचित प्रशंसा करके देश का भारी शत्रु बना हुआ है।

बाला —है तो तुम्हारा कहना एक प्रकार से ठीक किन्तु मैं ऐसे साम्राज्य को लेकर क्या करूंगा जिसमें अपने विचारानुसार धर्म से पराङ्मुख होऊं? थोड़े से महायानीय दोष भी पूरे मत को निन्द्य नहीं बना सकते।

ईश्वर —तो आप सम्राट् न होकर वास्तव में एक बौद्ध भिक्षु हैं।

बाला —भाई अब मैं सम्राट क्या राजा भी न रहूँगा अब कल्ही से बौद्ध भिक्षु ही हो जाऊंगा। तुम वज्र को ये बातें समझाना।

ईश्वर —भाई साहब! आपको क्या हुआ है क्या आप होश में नहीं हैं?

बाला —यह बात तुम कल ही जानोगे।

ईश्वर —क्या आप समझते हैं कि प्रकटादित्य में इतना भारी बोझ उठाने की सामर्थ्य है? आपही ने उसे बन्दी क्यों बनाया था?

बाला —इतना तो मैं भी देखता हूँ किन्तु क्या करूं? साम्राज्य रखने से धर्म जाता है और धर्म रखने से तुम्हारे ही मतानुसार साम्राज्य बच नहीं सकता।

ईश्वर —समझ लीजिये आप गुप्त वंश को डुबो रहे हैं। क्षमा कीजियेगा यह देश भर के होने जाने का प्रश्न है।

बाला —यदि मैं साम्राज्य स्थापित भी कर दूं तो क्या वज्र में उसके चलाने की योग्यता है ? जब नहीं है तो व्यर्थ को किसके लिये अपना धर्म छोड़ूं ?

ई० व० —यदि उनमें यह योग्यता होती ?

बाला —तो भी मेरे धर्म छोड़ने की आवश्यकता न थी वह स्वयं ही साम्राज्य स्थापित कर लेता। आखिर आत्मवंशी यशोधर्मन ही कब का सम्राट था ? जानते तो हो कि वीर भोग्या वसुन्धरा का मामला है।

ई० व० —(बालादित्य के पैरों पड़कर) आज मैंने जाना कि आपने कोई काम भूल से नहीं किया वरन् साम्राज्य को तुच्छ समझकर ठुकरा दिया है।

बाला —(ई० व० को हृदय से लगाकर) जो कुछ समझो भाई ! मैं तो एक बौद्ध भिक्षु हूँ आज तुम्हारे देश प्रेम से प्रसन्न होकर आशीर्वाद देता हूँ कि तुम्हारा ही मौखरि वंश निकट भविष्य में सम्राट् होगा और उसी के द्वारा गुप्त वंश के रुधिर में कुछ काल और साम्राज्य पद स्थापित रहेगा।

ई० व० —किन्तु दादाजी मैं तो साम्राज्य का प्रयत्न तक छोड़े बैठा हूँ और उसके लिये उत्सुक भी नहीं।

बाला —क्या समुद्र नदियों के पास प्रार्थना पत्र भेजता है ?

(पटाक्षेप)

दूसरा दृश्य

[स्थान ग्वालियर का जंगल दस हूण सिपाहियों का प्रवेश]

पहला सिपाही —बड़ा मजा आया। हम लोग तो समझा था कि हमारा ताकत खतम हो गया मगर शहंशाह आज़म बड़ा होशियारी से दुश्मन का आँख में धूल झोंका।

दूसरा सिपाही —यही तो हुआ ही। गुप्तों ने जो कहा उन्होंने सब कुछ मान लिया मगर छूटते ही ग्वालियर तक अपना कब्जा मुस्तहकम रक्खा।

तीसरा सिपाही —यहाँ तक किसका मजाल है कि हमारा सामना कर सके? बगाल जाने में गलती हो गया।

चौथा सिपाही —अगर पहले मालवा पर कोशिश होता तो इधर का फतेहयाबी से गुप्त लोग आप से आप दबा रहता।

पाँचवा सिपाही —अब तो वजीर पहले मालवा पर ही यूरिश करने का फिक्र में है। फौज का इन्तिजाम अच्छा हो रहा है।

प सि —देखें महादेवस्वामी इस बार कैसा नतीजा दिखलाता है?

ती सि —फतहयाबी का पूरा उम्मीद है। मालवा में क्या बगाल का सा नदी व झील थोड़े ही है कि अपना फौज मुल्क का हाल न जानने से कीचड़ में जा फसे।

चौ सि —अरे यार मु की बात बहुत हो चुका अब कुछ अपना जिक्र छेड़े। अपने को इन ऊंचा मामलों से क्या मतलब?

छठवाँ सि —और क्या? अफसर जो हुक्म देवेगा वह बजा वेगा आगे नतीजा महादेव स्वामी का हाथ में है।

दू सि —जब से हमारा शहँशाह मगध से निकलकर आया है हमारा छाती दस गज का हो गया है।

पाँ सि —क्यों न हो तुम्हारा वजन भी तो चाँद के साथ रोजाना बढ़ता है।

दू सि अगर उसी के साथ घटता भी न होता तो शायद हम इतना बढ़ जाता कि बिना आपका कंधा पर सवार हुये चलही न सकता।

पाँ सि —चल तो आप अब भी नहीं पाता शायद दिमाग से भी चाँद का कुछ सिलसिला हो।

चौ सि —अरे यार अकला इसी बेचारा से सब सिलसिला क्यों होने लगा? वजन इसका हुआ तो दिमाग अपना लगाये।

(सब लोग हसते हैं)

ती सि —अच्छा अब थोड़ा सा हिसाब हमारा लगा दवे।

प० सि —कहै क्या पूछता है?

ती सि —आज हम एक दुकान पर गया तो बनिया बोला कि अरवी साढ़े तीन पैसे की सवा सेर दगा।

चौ सि०—तब आप क्या कहा?

ती सि —हम बोला कि इतना हिसाब कौन करै? बस एक पैसा का पाव भर लेगा। वह बोला कि हमें वह नाराज नहीं कर सकता। साले को झक मार कर दना पड़ा।

प सि —हो यार बड़ा ही होशियार अकल से इतना दूर बसता है जैसे आफताब से जमीन।

ती सि —क्या धोखा खा गया? वह बोला कि नौ की लाखौ सात कि बेचौ तबौ न गहकी राजी। इसका क्या मतलब था?

छ सि —अजी जहाँ अरवी लिया था वहीं दो पैसा का अक्ल भी खरीद कर गाँठ बाँध लेता तो वक्त जरूरत काम आता।

ती सि —(बिगड़ कर) तुम यह कैसा बात करता है? क्या हम बेवकूफ था जो अक्ल खरीदने जाता? तुम खुद अक्ल मोल लेवै।

छ सि —हम तो पहले ही खरीद चुका है नहीं तो तुम को क्या सलाह देता? अच्छा उसका बात समझ पाता था?

ती सि —अजी कहाँ से जानता हम साफ साफ कहता था सो तो वह समझता न था और अपनी गजगजगजगज किये जाता था।

चै। सि —सदाशिव का मेहरबानी से फिर भी उसका मतलब तक पहुँच ही जाता होगा।

ती सि —ऐसा न होता तो सौदा क्या लेता? वह कहता था कि आपको इतना सस्ता सौदा दिये देता हूँ। बोहनी का वक्त है किसी से बताना मत।

पाँ सि —सभी कहीं दूकानदार बडा मक्कार होता है। एक तो सौदा में दूना दाम लेता है और गाहक पर एहसान भी जताता है। फिर ऊपर से महीने में आना रुपया सूद जोडता है।

आठ सि —यह भी एक बात है कि औरों से आठ आना सैकडा माहवार तक ले लेता है मगर सिपाहियों से आना रुपया से नीचे नहीं उतरता।

चै। सि —भाई सच पूछे तो हम लोग उसका पैसा मार भी बहुत लेता है।

ती सि —इसी से तो सब को सूद ज्यादा देना पडता है।

नवाँ सि —अजी तुम भी कैसा गवार है? अगर एक सिपाही बेइमानी करै तो दूसरा पर उसका घाटा क्यों लादा जावे? यह भी कोई बात है।

चै। सि —तभी तो वह कर्ज देना नहीं चाहता।

न सि —नहीं देगा तो हम जात लगावैगा। आखिर हम लोगों का भी तो गुजर होना चाहिये। तनख्वाह भी दो तीन तीन महीना पर मिलता है वह भी नपातुला। गुजर कैसे हो?

ती सि —तो क्या उसने आपका ठीका लिया है ?

आ० सि —कौन कहता है मगर आधा तनख्वाह अगर सूद और मुनाफे में उसी के हवाले कर देवे तो लड़का जोरू कैसे जिलावे ?

द सि —सूद का दर कुछ जरूर घटना चाहिये। अभी तो ऐसा हाल है कि बेईमान सिपाही मजा करता है और इमान दारों पर आफत आता है।

ती सि —अच्छा हम कहता है कि आप लोग भी पैसा क्यों नहीं जोड़ता। बानये को क्या काइ सौंप रता है ?

आ सि —आपका भी यही हाल है कि ब दीं सान खोदाई करदी। गाव खर रा न मी शिनासी। अरे जैसा सूम वह है वैसा दूसरा हो भी सकता है ? कभी पेट भर खाना तक तो खा नहीं सकता।

न सि —मगर यह गाव खर का क्या बात है ?

आ सि —अजी एक ने खुदा से दो गाव मांगे और रात को मकान का दरवाजा खुला रक्खा सुबह को देखता क्या है कि घर में बहुत सा गधा रेक रहा है। तभी उसने तैश खाकर खुदा से ऐसा कहा था।

द सि —अजी आज सब लोग जगल में क्यों जमा हुआ है ?

आ सि —इतना देर के बाद आपको यह सवाल खब ही सूझा।

न सि —अरे यार कुछ कहैगा भी कि यों ही जग्ल काफिया उड़ावैगा।

पाँ सि —बात यह है कि आज शादी करके एक बनिया इसी रास्ते वापस आने वाला है।

द सि —शायद उसका नया औरत भी खबसूरत होगा।

आ सि —क्या बात है साला बहुत सिपाहियों को ठग ठगकर मोटा हुआ है। माल और नाजनीन दोनों हाथ लगैगा।

(सब लोग ज़ोर से हँसते हैं)

छ सि —तब तो अच्छा मज़ा आवेगा मगर भाई सिपहसालार साहब कहाँ है? उसको पता पड़ जाने का खौफ तो नहीं है?

चौ सि —वह तो इस वक्त खुद शराब और नाज़नीन के चक्कर में है।

प सि —कोई ज़रा बढ़कर देखे कहीं बारात देख पड़ता है?

दू सि —बारात तो रुखसत हो चुकी है। सिर्फ सात आठ आदमी होगा।

न सि —अरे वह देखो डोला आ रहा है। सब लोग इधर उधर छिप जावें।

(दसो सिपाही छिप जाते हैं डोला के साथ कुछ लोगों का प्रवेश)

मालिक—अभी तो यहाँ कुछ आदमी समझ पड़ते थे अब कोई नहीं दिखता क्या मामला है?

श्री धर —पिता जी आप चिन्ता क्यों करते हैं? अब तो घर भी एक ही मंजिल रह गया है।

मालिक—कोई बात नहीं है आजकल स्त्रियाँ छीनने के विषय में हुआ सिपाहियों का बड़ा अपयश है। इसी से सन्देह होने लगता है।

श्रीधर —आखिर चार तिलंगे भी तो साथ हैं।

(दो हुआ सिपाही निकल कर)

प सि —तुम हुआ सिपाहियों का बात क्या बोला? बदमाश कहीं का। हमारा बदनामी करता है।

मालिक—(हाथ जोड़ कर) नहीं धर्मावतार क्षमा कीजिये। मैं तो आपका रिआया हूँ ग्वालियर ही के इलाके में बसता हूँ।

दू सि —नहीं तुम जरूर बदमाश है हम लोगों का खिलाफ अभी तुम बात बोला। बस धर देवै यहीं पर डोला और माल मता। हम लोग को जरूरत है।

मा —ता मालिक दश पाँच रुपये ले लीजिये इतना अत्याचार न कीजिये, दुहाई है।

प सि —तुम कौन लोग है?

मा —मालिक मेरे मैं तो आपका बनिया हूँ।

दू सि —तभी मोल तोल करता है; साला यह नहीं जानता कि हम कोई फकीर नहीं हैं। एक आना रुपया सूद खाना तो बहुत अच्छा लगता होगा।

प सि —आज सब हिसाब पूरा हो जावेगा।

श्री व —(अपने चारों तिलगों से) मारो इनको देखते क्या हो? ये ही डकैत हम सब को गालियाँ दे रहे हैं।

(चारों तिलगे लाठियाँ तान तान कर दौड़ते हैं किन्तु उधर शेष आठों सिपाही आकर उनको पकड़ लेते हैं)

दू सि —बनिया क दिल में इतना ताकत है कि फौजी सिपाहियों का मुकाबला करे। ऐसा बहादुरी कब से आया?

श्री व —अरे दुष्टो! बनियों को ऐसा गया बीता समझते हो! महाराजा विष्णुवर्द्धनजी स्वयं वैश्य हैं (झपट कर एक सिपाही पर लाठी चलाता है जिसे पकड़ कर वह उसको बाँध लेता है)

प सि —क्यों बुड्ढे! सिपाहियों का सामना करता है! यह नहीं जानता कि एक हुआ सिपाही तेरे ऐसे दस खबीसों के वास्ते काफी है।

मा —(जोर से चिल्लाता हुआ) अरे दौड़ो डकैत लूटे लेते हैं। हाय बारात लुटी जाती है।

(एक सिपाही मालिक को बाँध लेता है। चारों रक्षक तिलंगे भी बाँधे जाते हैं। कहार डोला रख देते हैं पाँच सैनिकों के साथ महाराज ईशान वर्मन का प्रवेश)

ई व —हैं मै क्या देख रहा हूँ? दिन दहाड़े डकैती! सो भी सिपाहियों द्वारा।

प सि —तुम कौन है जो हमारे सामने बढ़ बढ़ कर बात करता है? अपना रास्ता पकड़े नहीं तो अभी खाक में मिला देगा?

ई व —हम कोई भी हैं तुम लोग डाका डाल रहे हो। अभी भागो नहीं तो जान से हाथ धोओगे।

दू सि —अच्छा निकल आवै।

(दसों हुआ सिपाही तलवार निकाल कर युद्धोन्मुख होते हैं। ईशान वर्मन और उसके पाँचो सैनिक इन पर टूटते हैं और इन्हें धराशायी करते हैं। बराती छोड़ाये जाते हैं)

वणिक—(ईशान वर्मन के पैरों पड़ कर) महाराज! आप कौन हैं जो देवता बन कर मेरे इस गाढ़े समय में काम आये? मेरी तो लाज और धन दोनों की रक्षा हुई।

ई व —मेरा नाम ईशान वर्मन है। आप कहाँ के रहने वाले हैं?

बनिया—दीनबन्धु! आपका शुभ नाम तो हम लोग बहुत दिनों से सुनते थे किंतु दर्शनों से आज ही कृतार्थ हुआ। मै ग्वालियर प्रान्त का वैश्य हूँ। ये दुष्ट मेरी लाज बिगाड़ ही चुके थे कि सौभाग्य वश आपका आना हो गया। आप इस प्रान्त को भी मालवे में क्यों नहीं मिला देते? बड़ा ही अधर्म हो रहा है।

ई व —मुझे अत्यन्त हर्ष हुआ कि अकस्मात् मेरा आना इधर हो गया। मै नहीं जानता था कि दुष्टों ने इतना

अंधेर मचा रक्खा है। क्या इस प्रान्त में हमें सहायक मिलेंगे ?

बनिया—अन्न दाता ! सारा प्रान्त हूणों के अत्याचारों से थर्रा रहा है। आपके इस ओर ध्यान देते ही विजय रक्खी है। कृपया देर न कीजियेगा।

ई० व०—क्या हूण सेनापति भी सिपाहियों के डाकों में सह मत है ?

ब०—प्रकट में तो ऐसा नहीं है परन्तु लोग समझते हैं कि वे भी मिले होंगे। कम से कम सिपाहियों पर दबाव कम है और प्राय खुले खुले अत्याचार नित्य ही हुआ करते हैं।

ई० व०—अब मैं जाता हूँ। आशा है कि शेष रास्ते में आपको कष्ट न होगा।

ब०—(जेब से एक सुन्दर मोती की माला निकाल कर) यद्यपि मैं इस योग्य क्या भवदीय चरणरज भर भी नहीं हूँ तथापि यह नजर ग्रहण करके मुझे सनाथ कर दीजिये।

ई० व०—(माला को हाथ से छूकर) साहु जी ! आप से मैं योंही प्रसन्न हूँ। मैं आपसे कुछ भी नजर नहीं ले सकता हूँ। मैंने तो क्षत्रिय धर्म मात्र का पालन किया है। यद्यपि आप हमारी या महाराज विष्णु वर्द्धन की प्रजा नहीं हैं तो भी एक भारतीय सज्जन और हिन्दू तो हैं।

ब०—तो भी मुझ पर कृपा हो जाती मेरी प्रार्थना पर ध्यान दिया जावे।

ई० व०—आपका ऐसा कहना अयोग्य भी नहीं पर इसे अपने ही पास रखिये।

(पटाक्षेप)

दृश्य तीसरा

[स्थान सारनाथ]

(सम्राट् प्रकटादित्य और दुधष का प्रवेश)

स प्र —कहो दुधष ! कोई डौल नहीं लगाया ?

दु —किस विषय में सम्राट् !

स प्र —क्या तुम कुछ जानते हो ?

दु —क्या राजकुमारी इन्दु की बात पूछी जा रही है ?

स प्र —जी नहीं तिलोत्तमा और मञ्जुघोषा की।

दु —क्या वह इन दोनों से कम है ?

स प्र —है तो यार नहीं। क्या वह चन्द्र कभी मेरे हृदय कुमुदिनी को विकसित करेगा ?

दु —क्या ऐसी भी कोई वस्तु है जो सम्राट् प्रकटादित्य को अप्राप्य हो ?

स प्र —क्या सौन्दर्य भी आसाम या कलिंग है जो वीरसेन के पुरुषार्थ से मिल गये ?

दु —वे प्रान्त क्या एक साधारण राज्य प्रतिनिधि की कन्या से भी गये बीते हैं ?

स प्र —अरे मूख ! इस पर तो प्रकटादित्य के सहित सारा साम्राज्य न्योछावर है।

दु —इतना प्रेमाधिक्य मैंने आप में इससे पूव कभी नहीं देखा।

स प्र —अब तक ऐसी रूप राशि भी तो न मिली थी।

दु —राजकुमारी इन्दु को आप देखते सदा से आये हैं। अपने पिता धर्म दोष के साथ बड़े सम्राट की सेवा में प्राय बगाल में उपस्थित हुआ की है।

स प्र —धिक मूख ! तब तो वह निपट बालिका मात्र थी और अब है पूर्ण विकसिता नव युवती। जो सौन्दय उसका

कल उपवन भ्रमण में निखरा हुआ था वह त्रिलोक विजयी था।

दु —अच्छा प्रयोजन पर आता हूँ। मैंने उससे बात दो चार बार घुमाव फिराव से कर अवश्य पाइ थी किंतु मतलब पर नहीं पहुँच सका।

स प्र —क्यों क्या बाधा पडी ?

दु —डेरे पर ता मिलन का डौल न लगा हाँ उपवन भ्रमण आदि में कभी मिल गई। मैंने उसको सुना सुना कर मित्रों द्वारा आपकी कृपाओं एव महत्ता के बहुत विवरण कराये किंतु उसने सब सुनी अनसुनी करदी।

स प्र —आखिर स्वय उसने तुम से कुछ बात भी की ?

दु —मैंने भी आपकी गुणग्राहकता तथा प्रताप के बहुत राग अलापे किंतु वे सब मानों उसके कानों तक पहुँचे ही नहीं। उसने इस विषय पर एक प्रश्न भी नहीं किया और अति शीघ्र डौल से वार्तालाप समाप्त कर दी। यदि पा लिपुत्र या मालवे में मुझे देखा न होता तो बात भी न करती।

स प्र —फिर भी यह बात तो न होने ही के बराबर हुई।

दु —अवश्य बडी रूप गर्विता समझ पडती है।

स प्र —मामला टेढ़ा नजर आता है। आज उसकी इधर अवाई की खबर सुन कर आया हूँ। देखूं कैसी बोलती है ?

दु —जरा समझ बूझ कर बातें करना।

(नेपथ्य में गाना)

बिरमहु जोग जुगति मे भाइ।
यह संसार असार सकल विधि सार एक रघुराई॥ बिरमहु
ध्यान धारि भ्रुव बिच मन थिर करि निरखहु प्रभु चितलाई।
तजि मिथ्या जंजाल जगत के छाँडहु किन बिकलाई॥ बिरमहु

स प्र —अरे क्या यही योगिनी जी पधारती हैं जिनकी प्रशंसा बहुत कुछ सुनते आये हैं।

दु —(कुछ आगे बढ़कर देखता और पलटता है) जी हाँ वे ही तो हैं।

(योगिनी जी का प्रवेश)

स प्र —मै सम्राट बालादि य का पुत्र वज्रगुप्त प्रकटादित्य आपको प्रणाम करता हूँ।

(प्रणाम करता है)

यो —आयुष्मान भव सम्राट।

दु —सुधर्ष और मा यवती का पुत्र मे दुधष भी योगिनी माता को प्रणाम करता हूँ।

यो —अच्छा सुखी रहो।

स प्र —माताजी! शरीर तो स्वस्थ है?

यो —ईश्वर स ध्या तक भोजनों का प्रबध कर ही देता है; इससे अधिक कुछ चाहना भी नहीं है। आपके आठों रा यांग तो सुपुष्ट हैं? आशा है हूणों का आपसे कोई वैमनस्य न होगा।

स प्र —आपके आशीर्वाद् से अब तक साम्रा य उन्नतिशील है। आज कल हूण दल मालवे की ओर झुका हुआ है।

यो —आपसे तो कोई सहायता नहीं चाहते?

स प्र —अब मै उनका आश्रित न होकर पू य पिता जी का उत्तराधिकारी हूँ। उन्हें स्वय सन्धि का पालन योग्य है।

यो —फिर भी लोग पुराने सम्ब ध के कारण कुछ न कुछ प्रम भाव का अनुमान करते हैं।

दु —माताजी! यह उनकी भूल है। हमारे सम्राट् ने नाम मात्र को उनकी सहायता ली थी सो भी अपना पिंड छुड़ाने को। पितृ भक्ति के प्रतिकूल आपने कभी कुछ नहीं किया।

यो —मैं केवल एक भिक्षुणी होकर इस ऊंची राजनीति को क्या जान सकती हूँ ? लोगों में दिन रात फिरते रहने से कभी कभी कोई भनक कान में पड़ जाती है।

दु —अच्छा माताजी ! सम्राट् महाशय के एक प्रश्न पर क्या कोई आज्ञा कर दीजियेगा ?

स प्र —(हाथ जोड़कर) मेरी माता ! यह विनती मेरी ही समझियेगा। कहीं मुख से नहीं न निकल जावे अन्यथा मैं मानों पेड़ से ही गिर पड़ गा।

या —बेटा ! भविष्य की कुंजी केवल परमा मा के हाथ में है। मनुष्य ने इसका भेद नहीं जाना है। लोग जो कुछ भविष्य भाषण करते हैं वह धोखा मात्र समझो। आप के प्रश्नों के उत्तर हम लोगों से अच्छे पुरोहित अथवा मंत्री दे सकते हैं।

स प्र —बड़े आश्चर्य की बात है माताजी !

या —वास्तव में भविष्य भाषण वर्तमान दशाओं के ज्ञान से प्राप्त बुद्धिमानों द्वारा भविष्य पर सूझ मात्र है। आपकी वर्तमान स्थिति जो अनुभवी जितनी अच्छी जानता होगा उतना ही अच्छा उसका भविष्य भाषण होगा।

दु —पर संसार कुछ और ही मान रहा है। लोग आप ही को सर्वोत्कृष्ट भवि यक्ता मानते हैं।

स प्र —माताजी ! मुझे निराश न कीजिये, मेरे लिये यह बड़ी महत्ता का प्रश्न है।

यो —बेटा ! मै भिक्षुणी संसार की केवल रूखी सूखी दो पनेथी तथा फटे पुराने दो चीथड़ों की ऋणी रहती हूँ जिसके बदले उसकी भलाई के लिये ईश्वर से नित्य प्रार्थना करती हूँ। मुझ मंगिनी को परमा मा ने किसी से बढ़कर कोई

शक्ति नहीं दी। जो कुछ दिया है। वह स्वार्थ त्याग का बल मात्र है।

स प्र —इसी बल में तो ऐसी महत्ता है कि सम्राट् लोग भी आपके भिक्षुक हैं। आपको भिक्षुणी कौन मूर्ख कह सकता है?

यो —बेटा यह तुम्हारी गुणग्राहकता है। अब कहो पूछो क्या पूछते हो? मैं न तो भविष्य जान सकती हूँ न उस पर मुझे तिल मात्र अधिकार है। जो कुछ कहूँगी वह मेरी सम्मति मात्र होगी।

तु —तो फिर उत्तर दीजिये प्रश्न आपसे छिपा थोड़े ही है?

यो —तुम्हारा मित्र किसी सौ वयमयी पर मुग्ध समझ पड़ता है। उत्तर यही है कि वह युवती भी है और केवल विभव का मान नहीं करती सौंदर्य आवश्यक है।

(योगिनी का प्रस्थान)

तु —योगिनी माता वास्तव में सवज्ञा हैं।

स प्र —अवश्य, जैसा सुना वैसा देखा। संसार की सारी गुत्थियाँ इनके हस्तामलक हैं।

तु —क्यों नहीं? किंतु उत्तर कुछ गोल है।

स प्र —इसका पूरा अर्थ आगे वाली घटनाओं से प्रकट होगा।

अरे वह देखो सखी के साथ राजकुमारी भी आ रही है।

(राजकुमारी इन्दु और सखी का प्रवेश)

रा कु —(सम्राट् को देखकर) जय जय सम्राट्! कहिये शरीर तो स्वस्थ है? अहो भाग्य कि आज अचानक दर्शन मिल गये।

स प्र —(प्रसन्नता नाट्य करते हुए) बड़ी कृपा राजकुमारी जी!

पिताजी के समय धर्मघोष जी दो चार बार बंगाल पधारे थे।

रा॰ कु॰—उन्हीं अवसरों पर कभी कभी मुझे आपके दर्शन भी मिल गये थे।

तु॰—हर्ष की बात है कि चार छै वर्षों से न देखने पर भी आपने इन्हें पहचान लिया।

सखी—क्या आपके पहचानने में कुछ देर हुई थी?

तु॰—देर क्यों होने लगी गुणी लोग स्मरण शक्ति भी अच्छी रखते हैं।

स॰ प्र॰—इन दिनों इधर कहां पधारी थीं?

रा॰ कु॰—गंगा स्नान को आई थी मन में आया कि मृगदाव के स्तूपादि भी देख लूं बहुत काल से न देखे थे।

स॰ प्र॰—(सखी से) मुझे कुछ अनोखा सा लगता है कि धर्मघोष जी ने अब तक इनके विवाह का कोई प्रबंध शायद नहीं किया।

रा॰ कु॰—सम्राट् शिरोमणि! उन्होंने इस विषय को पूर्णतया मेरी ही इच्छा पर छोड़ रक्खा है।

स॰ प्र॰—यही तो योग्य है।

स॰—उन्होंने हमारी राजकुमारी को शस्त्र और शास्त्र दोनों की शिक्षा दिलाई थी। इसी लिये इनके मानस बल पर विश्वास करके इनको बहुत कुछ स्वतन्त्रता दे रक्खी है।

स॰ प्र॰—तो आपकी राजकुमारीजी न केवल रूप में रमा हैं वरन् दुर्गा और सरस्वती के भी सुगुण धारण किये हुए हैं।

रा॰ कु॰—(लज्जा नाट्य करते हुए सखी से) दुर मूर्खा! तुझे ऐसी महती समाज में झूठी बड़ाई करते लज्जा नहीं लगती।

स प्र —सखी को आप क्यों डाम्ती हैं? बचारी ने सच सच तो कहा है।

रा कु —नहीं सम्राट! मैने विद्या तथा युद्ध कला में कोई मुख्यता प्राप्त नहीं की है।

स प्र —मै इस बात में धर्मदोषजी का मानस प्राबल्य देखता हूँ।

रा कु —उनकी महत्ता सभी बातों में बढ़ी चढ़ी है। पर सम्भव है मेरा यह मत केवल पितृ प्रेमवश स्थापित हुआ हो।

स प्र —यदि धृष्टता न हो तो क्या मै पूछ सकता हूँ कि आपने अब तक अपना विवाह क्यों नहीं किया? यदि इस प्रश्न में अनुचित जिज्ञासा का भाव हो तो आप कुछ न कहें। यदि सखी जी अथवा दुधष के सामने उत्तर न दना चाहें तो यह लाग हट कर अलग खड़े हो जावें।

रा कु —यह मेरी अन्तरंगा सखी हैं, इनके सामने मै सभी बातें कर सकती हूँ। यदि दुधर्ष जी के सामने आपको पृच्छा करने अथवा उत्तर सुनने में संकोच न हो तो मुझे कोई आपत्ति नहीं है क्योंकि मै इन्हें भी दीर्घ काल से जानती हूँ।

स प्र —यदि धृष्टता न समझी जावे तो उत्तर से कृतार्थ किया जाऊ।

रा कु —यह प्रश्न तो मेरे विचारों से सम्बद्ध है। उनका सब के सम्मुख प्रकट करना अयोग्य है किन्तु आप मेरे पिता के प्राचीन स्वामी के पुत्र हैं अतएव आपसे विश्वस्त भाव से उत्तर कह सकती हूँ।

स प्र —बड़ी कृपा होगी।

रा कु —मुझे अब तक कोई योग्य वर मिला ही नहीं यदि कोई देख भी पड़ा तो अवकाशाभाव या अन्य कारणों से वह विषय बढ़ नहीं सका।

स प्र —मुझे बड़ी प्रसन्नता है कि आपने बिल्कुल स्वच्छ भाव से अपने विचार कह दिये। अब यदि दूसरी धृष्टता न हो तो मैं पूछूंगा कि क्या मेरे ऊपर कृपा होनी सम्भव है? देखने में मेरा ऐसा कथन सहसापन का उदाहरण समझा जा सकता है किंतु हम लोगों का सम्बन्ध प्राचीन वरन् पैत्रिक है सो आशा है कि आप मेरी प्रार्थना पर आततायी पन का दोष न लगायेंगी।

रा कु —नहीं इसमें कोई सहसापन नहीं है। आप इतने बड़े सम्राट हैं सो मेरी जैसी साधारण कन्याओं को इसका अभिमान होना चाहिये पर इसमें एक बड़ी रुकावट की बात यह है कि श्रीमान् के दो महारानियाँ प्रस्तुत हैं। मेरी समझ में आपको तृतीय विवाह की कामना न करनी चाहिये।

स प्र —क्यों इसमें अनुचित क्या है? अपने यहाँ के इतिहास और रवाज क्या इसके प्रतिकूल हैं?

रा कु —सो तो सब ठीक है किंतु इसमें सब रानियों के साथ समुचित व्यवहार असम्भव है जिसे मैं स्त्री जाति का अपमान समझती हूँ।

स प्र —यह तो बड़ा ही नवीन विचार है।

रा० कु —किंतु है सत्य।

स प्र —क्या सम्राटों को छोड़ महाराजाओं तक के लिये चार विवाह साधारण नहीं कहे जाते हैं?

रा कु —पर ध्यान रखना चाहिये कि ऐसे विचार स्थापित एवं दृढ़ करने वाले लोग पुरुष ही हैं, किसी स्त्री ने तो ऐसा योग्य नहीं कहा?

स प्र —वे इतिहास लेखक थे; जो बातें होती गईं वे अंकित

करते गये। महारानियों ने जो विवाह किये वे सब अनिच्छा से तो नहीं किये।

रा कु—किंतु नासमझी से अवश्य किये क्योंकि उनमें से बहुतों को और कभी कभी सबको पछताना पड़ा जैसा कि दशरथ की रानियों का उदाहरण है। वहां बाचाता महारानी कैकेयी भी अंत में सुखी न रही।

स प्र—प्रपितामही लिच्छवी महारानी कैसी रहीं?

रा कु—उनकी सपत्नियां तो दुखित होंगी। जन्म भर ये स"कारित न हुईं न उनका जेष्ठ पुत्र भी समुद्र गुप्त के आगे रा"याधिकारी हुआ।

स प्र—विजयी समुद्र गुप्त का स कार गुणों के कारण हुआ।

रा कु—लिच्छवी माता के पुत्र होने से भी उनकी महत्ता थी।

स प्र—यह कथन असन्दिग्ध नहीं है। उनके गुणों की मुख्यता ही विशेष मान्य है।

रा कु—क्या यत्ता महारानियां अपना भविष्य जान कर भी विवाह करती हैं?

स प्र—क्या आपकी सी सबगुण सम्पन्ना की कभी वह गति हो सकती है?

रा कु—क्या मैं अपनी सपत्नियों का अपमान कर स्त्री जाति की उपकारिणी कही जा सकती हूँ?

स प्र—अब आप संसारी बातों से ऊँचे उठ गईं। मेरा चित्त रूप का ही लोभी नहीं है वरन् उच्चाशयपूर्ण विचारों के कारण भी विवश है। तो भी आपको जीवन यात्रा में सदैव अलौकिक विचारों से काम न लेना चाहिये। एक सम्राट् का चित्त आप पर एक दम मुग्ध हो गया है। इसके सभी फलों एव परिणामों पर भी ध्यान रखना चाहिये।

सोचिये तो

कबते बिधि मंजु मनोहर नैन

चलाकी इती दरसावन लागे ?

कबते निरदै चितचार भये

बर बाँकी अदा सरसावन लागे ?

कब ते बतियान में माधुरी बानि

अचानक आनि बसी सखि तेरे ?

हठि मोहि लियो दोऊ लालनी नैन

फिरैं बने बावरे रावरे चेरे ॥

चन्द्र कलंक-मयो जग जाहिर

तू निकलंक सुधा बरसावै

क्यों तब सोई करै नहि मोतन

मेरो हियो हठि क्यों तरसावै ?

न्याय की बात प्रसिद्ध यही

दुखिया पर नेक दया दरसावै

एकहि दीठि को प्यासो बिचारि

भद्र अब क्यों न सुखै सरसावै ?

रा कु —मैंने अभी तक आपकी प्रतिष्ठा के प्रतिकूल आधा अक्षर भी नहीं कहा है किंतु अब आप अनौचित्य की ओर बढ़ गये हैं यदि भवदीय प्रतिष्ठा पैत्रिक सम्बन्ध तथा अपने भी प्राचीन व्यवहार का ध्यान न होता तो क्या इस आत्मीय अथच गोप्य विषय पर मैं आपसे इस प्रकार कथोपकथन करती ? तब आपको अनुचित भाव गद्य अथवा पद्य में प्रकट करना क्या गर्हित नहीं है ?

स प्र —(हाथ जोड़ कर) अपराध क्षमा हो राजकुमारी ! मुझसे कहते न बना । तो भी इतनी विनती करूगा कि क्या मुझ दीन पर अनुग्रह असम्भव है ?

रा कु —अच्छा तो सुनिये। एक तो आपकी आयु ४ वर्ष की है और मेरी केवल ८ साल की सो अनमेल विवाह कैसे हो? दूसरे महत्ता अथवा स्वार्थ इन्हीं दो विचारों से ऐसे सार गर्भित प्रस्ताव का निर्णय हो सकता है। आप ही ने अभी आज्ञा की कि दुनियाँ में पहले विचार से जीवन यात्रा सदैव सुख पूर्वक नहीं चल सकती। आप भी मानेंगे कि उच्च विचारों से मुझे स्त्री जाति के अपमान की ओर अग्रसर होना अयोग्य है।

स प्र —मैं इसमें स्त्रियों का कोई अपमान समझता तो नहीं किन्तु आप स्वार्थ के विचार से भी कथन कीजिये। आशा है कि बाबाता साम्राज्ञी होना आपको अरुचिकर न होगा?

रा कु —साम्राज्ञी होना कौन ना पसन्द करेगी किन्तु बाबाता पद में मुझे बेचारी राज महिषी तथा अन्य सपत्नियों के लटके और सूखे हुए मुखों एवं उसासों पर इतना ध्यान जमता है कि अपना सुख तुच्छ सा पड़ने लगता है।

स प्र —आप फिर सांसारिक बातों को छोड़ अलौकिक उदारता की ओर चली गई। कृपया ऐसे भावों को त्याग कर विचार कीजिये।

रा कु —ऐसा मैं कर तो सकती नहीं किन्तु तर्क के लिये यही समझिये कि छोड़ देती हूँ।

स प्र —तो कथन कीजिये।

रा कु —मैं बिना पूर्ण मानसिक सुख के साम्राज्य पद को ग्राह्य नहीं मानती। आपने मुझ में वास्तविक अथवा कल्पित गुण देख कर मेरा सत्कार किया किन्तु अभी आपने कौन से गुण मुझे दिखाये?

स प्र —तो यही सही अभी लक्ष्य भेदन हो। हम दोनों तीन तीन बाण चलावें।

स —बहुत ठीक है।

रा कु —मैं पीछे तो हटती नहीं कि तु हार भी गई तो सम्राट् की वीरता क्या प्रकट हुई?

स प्र —वचनों से अब न फिरिये।

रा कु —नहीं फिरने का क्या संयोग है? पर मैंने कोई वचन दिया नहीं।

(लक्ष्य रख कर सम्राट् और राजकुमारी तीन तीन बाण चलाती हैं। सम्राट दो बार असफल रहता है और राजकुमारी तीनों बार सफल होती है।)

तु —न मालूम आज हमारे सम्राट को क्या हो गया जो दो बार लक्ष्य बच गया? समझ पड़ता है कि प्रेमाधिक्य से आपका हाथ वश में न रहा।

स —अब इन बहाने बाजियों से काम नहीं चल सकता।

तु —एक प्रसिद्ध सम्राट् से ऐसी बातें नहीं की जातीं। अच्छा आप दोनों अब हमारी बन्दिनी हैं। देखें मेरे होते हुए कौन मेरे साम्राज्य की मनचाही रूपराशि को हटा सकता है?

रा कु —(सम्राट् से) श्रीमान्! क्या ये बातें ठीक हैं?

स प्र —यद्यपि राक्षस विवाह का विधान शास्त्र में है तथापि मैं केवल विनती से आपको प्रसन्न करना चाहता हूँ।

रा कु —अच्छा आप अपने मुख से राक्षसी वृत्ति तक धारण कर सकते हैं।

स —और यदि इस प्रकार हमारी सखी अपना हठ न छोड़े?

स प्र —तो तुधव जैसा कहते हैं सो असम्भव नहीं।

स —क्या गुप्तवंश के सम्राट होकर आप किसी कुलीन स्त्री पर बलात्कार योग्य समझते हैं ? क्या महाराज ईशान वर्मन के राज्य में ऐसा सम्भव है ?

हु —इसे अयोग्य कहता कौन है ? क्या देवव्रत भीष्म ने काशी पुरी में अम्बा अम्बिका और अम्बालिका के संबंध में कोई अशोभन कार्य किया था ?

रा कु —हाय मैं अब क्या सुन रही हूँ ? क्या अबलाओं के रक्षक भारत वर्ष से उठ गए ? राजन् ! यह भी समझ लीजिए कि यदि आपने मुझे हाथ तक लगा दिया तो जैसे सतीजी के शरीर से अग्नि की ज्वाला निकल पड़ी थी वही अब भी हो सकता है ; अन्तर केवल यही सम्भव है कि ऐसी ज्वाला में स्वयं आप का भी शरीर कहीं भस्मीभूत न होजाय।

(पाँच साथियों सहित शर्व वर्मन और सुभद्र का प्रवेश)

श० व —(प्रकटादित्य से) प्रणाम भाई साहब ! कहिए यहाँ अबलाओं से क्या विवाद हो रहा है ? यह भी क्या मगध है ? क्या कान्यकुब्ज देश में भी ऐसा अत्याचार सम्भव है ?

स प्र —अरे कुल शत्रु ! क्या अब तेरी ऐसी हिम्मत हो गई ? हमारे बंगाल में कहावत प्रसिद्ध ही है कि भाई भाई ठाईं ठाईं।

श व —भाई साहब ! यों तो आप मुझसे बड़े होने के कारण पूज्य थे पर पिताजी के राज्य का धर्षण उनके मित्र की राजकुमारी का अपमान और स्त्रियों पर अत्याचार ये तीन पातक यदि क्षम्य समझूँ तो भ्रातृ विरोध से बच सकता हूँ।

स प्र —असली बात क्यों नहीं कहते कि अपनी प्रेयसी के लिए भ्रातृ भाव विच्छेद तुच्छ समझते हो।

श व —यदि यह भी ठीक और आपको ज्ञात हो तो अनुज प्रिया पर कुदृष्टि डालने का पातक लेकर भ्रातृ भाव का धर्षण पहले आपने किया कि मैंने ?

स प्र —तो क्या युद्ध तक होगा ?

श व —यदि अनिवार्य हो तो अवश्य।

स प्र —अच्छा यों सही मैं उससे कब विमुख हो सकता हूं ?

दु —मेरे रहते हुए सम्राट को खड्ग ग्रहण की आवश्यकता नहीं।

सुभद्र—आपके लिए मैं प्रस्तुत हूं।

श व —(सुभद्र से) यद्यपि कथन आपका योग्य है तथापि आज मेरी ही युद्धेच्छा है।

(दुर्धर्ष और शर्व वमन में कृपाण युद्ध होकर दुर्धर्ष सपात होता है)

सुभद्र—(प्रकटादित्य से) अब श्रीमान भी निकल आवें, हम दोनों में से चाहे जिससे दो दो हाथ हो जावें। बाहर आपके दस सिपाही प्रस्तुत हैं और हमारे पांच ही। कहिए उन्हें भी पुकार लूं।

स प्र —मैं ऐसे साधारण लोगों के मुंह नहीं लगता (दुर्धर्ष के साथ प्रस्थान)

स —धन्य शूर शिरोमणि! हमारी राजकुमारी की रक्षा आज आपही के हाथ लिखी थी। सम्राट तो बड़े क्रूर एवं कायर निकले।

श व —राजकुमारी जी! अब जहां आज्ञा हो वहीं पहुंचा आऊं ? बड़ा खेद है कि पूज्य पिताजी के राज्य में आपको कष्ट हुआ।

रा कु —वीर युवराज! मैं आपकी अत्यन्त कृतज्ञ हुई।

स —क्या मैं कह सकती हूं कि हमारी राजकुमारी को उनके

पिताजी ने बहुत कुछ स्वतन्त्रता दे रक्खी है ? राजकुमारी जी का यह उपकार हम लोग यों हीं नहीं टाल सकतीं।

श व —(राजकुमारी प्रति) मैं इस थोड़ी सी सेवा का इतना मूल्य नहीं माँग सकता। यदि अन्य कारणों से आपकी कृपा इस तुच्छ पर हो तो यह अपने को आपसे सभी भाँति कृतार्थ समझेगा किन्तु वह किसी उपकार के बदले में न होनी चाहिए।

स —क्या श्री विश्वनाथजी के दर्शन का दिन आप भूल गए ?

श व —भला ऐसी बात कोई आज म भूल सकता है ?

रा कु —तो मैं स्पष्ट कहे देती हूं कि बरूंगी किसी और को नहीं किन्तु जब तक आप मेरी कठिन प्रतिज्ञा पूरी न कर सकेंगे तब तक चाहे आजन्म क्यों न हो यह अबला कुमारी ही रहेगी। या तो प्रण पूरा होने पर आपकी दासी बनूंगी अन्यथा इसी दशा में शरीर त्याग दूंगी।

श व —अच्छा तो वह कौनसी प्रतिज्ञा है ? मैं उसे पालन करने का तन मन धन से भगीरथ प्रयत्न करूंगा।

रा कु —मेरी दृढ़ प्रतिज्ञा यही है कि एक साधारण कन्या होते हुए भी मैं उसी को बरूंगी जो वीर पुरुष हूणों का दमन कर भारत स्वतन्त्रता का डंका देश भर में फिर से बजवा दे। कहिए इस पर क्या विचार है ?

श व —मैं इस प्रतिज्ञा को सुन कर अत्यंत प्रसन्न हुआ मेरी आपही की सी अकांक्षा है भी। अब हूणा पराभव पर्यन्त हम दोनों अविवाहित ही रहेंगे।

सुभद्र—अरे दोनों क्या चारों।

रा कु —(सखी से) क्यों बहिन ! क्या यही बात है ?

स —ठठोली की क्या आवश्यकता ? देखा जायगा।

(पटाक्षेप)

दृश्य चौथा

[स्थान उज्जयिनी मैदान फौजी]

(उपसेनापति कविराज और २५ सिपाहियों का प्रवेश)

उपसेनापति—भाइयों ! आज आप लोगों से एक बड़े महत्त्व के प्रश्न पर बात करनी है। आप जानते ही हैं कि हूण लोग प्राय २ २२ साल से भारत वर्ष में आ डटे हैं और अनेक प्रकार के अत्याचार कर रहे हैं। जब तक वे देश से न निकल जायँगे यहाँ की शांति प्रिय प्रजा को चैन नहीं मिल सकती। हर्ष का विषय है कि हमारे स्वामी महाराज ईशान वमन चिरकाल से इस ओर झुके हैं और अब बहुत शीघ्र हूण दल पर चढ़ कर फिर से देश को पवित्र बनाने वाले हैं। जब से इन असभ्य विदेशियों का प्रभाव देश में फैला है न स्त्रियों की रक्षा होने पाती है न धन की। प्राय वर्ष हुए सम्राट बालादित्य ने उन्हें बंगाल में पराजित करके सार भारतोद्धार का संधि पत्र भी लिखाया किंतु उनके चंगुल से मुक्त होते ही असभ्य मिहिर कुल ने उसका बिलकुल मान नहीं किया। अब मालवा में तो हम लोग स्वतंत्र हैं और पंजाब में भी हूण अत्याचार सीमित है किंतु शेष मध्यभारत की दशा शोचनीय है। सीदियन शक और कुशान भी हमारे ऊपर प्रभाव जमाने का प्रयत्न कर चुके हैं किन्तु भारत ने समय पर उन्हें गर्द बर्द करके अपना पुनरुद्धार किया है। आशा है कि अब भी हमारा प्राचीन शौर्य नष्ट नहीं हुआ है और आज विजयार्थ प्रयाण करके हम अपना पवित्र देश हूणों के अत्याचार से बचाने में फिर भी समर्थ होंगे।

सैनिक लोग—अवश्य। अवश्य।

उ से प —क्या तुममें साहस की कमी है?

सै लो —बि कुल नहीं।

उ से प —क्या तुमारे उत्साह में कोई क्षति है?

सै लो —अणु मात्र नहीं।

उ से प —अब आप लोग अपने कविराज का साहित्य श्रवण करें।

सै लो —बहुत ही ठीक है।

कविराज—या धरातल पै हैं अनेकन देश
किये जिन सभ्यता में बढ़ि नाम।
जिन देस विदेसन में जस पूरि
बगारयो प्रताप महीतल ठाम।
सुचमू जिनकी लखि कै तेहि काल
नहीं सक्यो साहस कोऊ सम्हाल।
त्यों नहीं छिन आगि सक्यो उनकी
करबाल की धार कोऊ विकराल।
समै लहि पै वै भये चकचूर
पता कहुँ नेकु लगै न अजौं।
भली सबतें बढ़ि भारत भूमि
कयौ यहि की जनि आस तजौं॥ १॥

सै लो —भारत माता की जै।

कविराज—जबै ग्रीक सिक न्दर भूप महान अनी
सजि भारत पै चढ्यो कोपि।
तबै सोचि उठे कछु लोग बिहाल
अवस्यहि जायगो भारत लोपि।
महानन्द की फौज लखे पै कराल
सिकन्दर को दल मानो खिलान।

नहीं धारि सक्यो चित मैं छिन धीर
स्वदेस की गैल गही घबरात।
करौ करतव्य सदा मन लाय
न नेकहु भारती होत लजौ।
भली सबते बढ़ि भारत भूमि
कबौ यहि की जनि आस तजौ॥ २॥

सै ज्ञो—भारत माता की जै

कविराज—इतै आइ विजे छित और हु जाति
यथा शक त्योंही कुशानरु हूण।
कै लियो तिन राज कछू दिन औसि
पै अंत मैं भो सब को मद चूण।
है नहीं अबै हूणन को गयो राज
पै पूब को है अब दर्प न शेष।
चलिये अबहीं ये मिटगे अवश्य
न है अब यामें सन्देह विशेष।
सुहि हु औ बौध मिलौ हरषाय
न नेकहु भारती होत लजौ।
भली सबते बढ़ि भारत भूमि
कबौ यहि की जनि आस तजौ॥ ३॥

सै ज्ञो—भारत माता की जै।

क रा—भारत पुन्य भूमि जगजानी।
मनु बावन अरु भरत भूप मे इत सब गुन गनखानी॥ भारत
सगर सुदास परसुधर कौशिक और महामुनि ज्ञानी
राम युधिष्ठिर भीम द्रोण से पारथ कहौं कहानी॥ भारत
राम कृष्ण द्वैपायन जानहु बादरायनहु मानी।
जनमेजय सीरध्वज जनकहु जागबलिक विज्ञानी॥ भारत०

यमाचार्य कठ ज्ञान बखा या जैमिन कपिल सुबानी
शास्त्र अनेकन किए उपस्थित किथि ध्वजा फहरानी॥ भारत

सै जो —भारत माता की जै।

क रा —गौतम बुध चाणक्य से मौर्य चन्द्र से ख्यात।
कालिदास औ भास से ऐसो भारत ख्यात ॥ ५ ॥

सै जो —भारत माता की जै।

क रा —विक्रमादित्य प्रमार भये
पुनि विक्रम चन्द्र महीपति राजे।
गुप्त समुद्रहु स्कन्द हते
परभा बगराय भले गल गाजे।
यों हीं अनेकन वीर तथा
वर पंडित भे बढ़ि एक तें एकौ।
ऐसे अपूरब दसकि कैसे
बराबरी हुओ सकै करि नेकौ ॥ ६ ॥

सै जो —भारत माता की जै।

क रा —एक है बात अवस्य तऊ
कि नहीं पर सन पै हम धाये।
सैन लै गंजन कै तिनको मद
नेक नहीं ति ह धूरि मिलाये।
सभ्यता तौहु विदेसन दी हीं
असोक प्रकास भले बगराये।
क्यो तब कोऊ सकै कहि पाच
न सोच कछू इतिहास के ध्याये ॥ ७ ॥

सै जो —भारत माता की जै।

क रा —पै यदि चाहै यही जग तौ
हमें कौन सकोच करैं हमहूँ यों।

धाय चढ़ैं परदेसन पै
के बहाने अनेक उड़ावैं ध्वजा त्यों।
चूर करैं तिनको अभिमान
असभ्य तिन्हैं बतरावैं मवेसी।
तौ हमैं सूर बखानैं जहान पै
सभ्यता भारत की नहिं ऐसी ॥ ८ ॥

सै लो —भारत माता की जै।

क रा —बीर सबै गज गाजि कै मर्दि हूण बल आजु।
फिरि कीरति फैलाय जग थपौ स्वदेसी राजु ॥ ९ ॥

सै लो —भारत माता की जै।

(युवराज शव वर्मन का प्रवेश)

उ से प —जै जै युवराज ! स्वागत।

श व —सेनापतिजी ! प्रस्थान के लिये सेना सन्नद्ध तो होगी ?

उ से प —अन्नदाता ! सारी प्रस्तुत है। उधर का क्या हाल है ?

श व —अभी कहता हूँ (सैनिकों से) भाइयो ! मै आपके लिये बहुत ही सुखद समाचार लाया हूँ।

एक सै —युवराज महोदय की जै। जहाँ महाराज ईशान सैन संचालक हैं वहाँ भी शुभ समाचार न मिलेंगे तो कहाँ मिलगे ?

श व — दो ढाई महीने दल संचालन करके पूज्य पिताजी ने सारी हूण सेना ऐसे स्थान पर एकत्रित करली है जहाँ वह चारों ओर से हमारी फौज से घिरी हुई है। वह स्थान भी यहाँ से केवल दसपाँच योजन है। यों ही उज्जयिनी का दल पहुँचेगा त्यों हीं युद्ध क्या शत्रु सेना के वध का कार्य आरंभ हो जावेगा। अब चलने में देरी

न हो। मैं पितृ चरणों द्वारा प्रेषित होकर ही अभी यहाँ पहुँचा हूँ। इस चमू का सेनापति मैं ही हूँगा।

सै लो —(हर्ष नाट्य करते हुए) महाराज विष्णु वर्द्धन की जै महाराज ईशान वर्मन की जै राजकुमार शर्व वर्मन की जै।

(सब का हर्ष नाद करते हुए प्रस्थान)

पटाक्षेपण

दृश्य पाँचवाँ

[स्थान स्थाण्वीश्वर महाराज विष्णु वर्द्धन का सभाभवन।]

(महाराज विष्णु वर्द्धन सिंहासन पर बैठे हैं धर्मदोष हरवर्द्धन वृद्ध सेनापति और कविराज स्थित हैं परिचारक लोग यथा स्थान खड़े हैं।)

सेनापति—आज हमारे महाराज को सम्राट कह कर पुकारने का शुभ अवसर प्राप्त है। कैसा चिर वांछित मांगलिक दिन उपस्थित हुआ है।

वृद्ध—अवश्य इस दिन की हम लोग वर्षों से प्रतीक्षा करते आये हैं।

ह० व —प्रतीक्षा ही क्यों इसके लिये सभी लोगों ने दौड़ते दौड़ते पृथ्वी आकाश एक कर डाला। जिस दिन पितृ चरणों ने यह आरम्भ उठाया था उस दिन मेरे चित्त में सन्देह की मात्रा कम न थी किंतु स्थाणु भगवान ने सब काम सुगमता पूर्वक पार लगा दिया।

वि व —तुम्हारे सन्देह के लिये उचित कारण भी कम उपस्थित न थे। साम्राज्य स्थापन कोई हंसी ठट्ठा नहीं है। इसमें जोखिम की मात्रा इस प्रचुरता से रहती है कि :—

बचौ तो चाखो प्रेम रस गिरौ तो चकनाचूर ।

क रा —यही बात है अन्नदाता ! कि तु आप सरीखे पुरुष सिंहों के लिये भय का पाठ नहीं बना है। सुव्यवस्थित आरम्भ वारे भी लग ही जाते हैं।

वि व —अच्छा सेनापति जी ! अब युद्ध का वर्णन भी सुना जाइये। यद्यपि इधर उधर से सुन मैंने बहुत कुछ रक्खा है तथापि आप ऐसा सांगोपांग कथन कीजिये मानों मैं कुछ नहीं जानता।

वृद्ध—ऐसे ही विवरण में साहि यिक स्वाद भी उपलब्ध होता है।

क रा —(दम से) आप ता पूर्ण पंडित हाने से का य शास्त्र के पारगत हैं कि तु यदि सेनापति महाशयजी साहि य गर्भित विवरण दने लगें ता मुझे कौन पूछेगा ?

यु व —कविराजजी ! यथा तथ्य युक्त सच्चे वर्णन में साहि यिक स्वाद कम नहीं होता। फिर भी आप उतावले क्यों होते हैं ? आपके मधुर छन्दों के लिए बहुत रिक्तता शेष रहेगी। सेनापति फिर भी सामरिक पुरुष मात्र हैं कवि नहीं।

से प —नहीं युवराज महाशय ! मैं साहि य से सौ कोस पर हूँ।

वि व —अच्छा फिर कथन कीजिये।

से प —जो आज्ञा। गुप्तराज बालादित्य से पराजित होकर ही मिहिरकुल ने समझा कि जल पूर्ण बग भूमि में पदार्पण करने में उसने भूल की थी।

वृद्ध—बहुत शीघ्र उसकी बुद्धि ने काम किया।

से प —अन तर मध्य एशिया से भी हूण सैनिक मँगा कर उसने अपनी क्षत विक्षत सेना को सुगठित किया। उसके पास इस प्रकार प्रायः डेढ़ लक्ष दल होगया।

ह व०—इस बीच में आपने निर्बलावस्था में उसे नष्ट करने का प्रयत्न क्यों न किया?

से० प —हमारी भी शक्ति उस काल इतनी न थी कि काश्मीर में घुस कर हम उसका सामना कर सकते। बहुत कुछ बल वर्द्धन करने पर भी अद्यावधि हमारे पास एक लक्ष मात्र सेना एकत्र हो पाई है।

धर्मघोष—यही तो बात है। अपना नव संचित बल यदि बड़ी ही योग्यता से परिवर्द्धित अथच रक्षित न होता तो इतना भी कार्य सम्पादन कभी न हो पाता।

धि व —क्यों नहीं हम लोगों ने जो अब तक कर पाया है वही आशा से अधिक तथा महाराज ईशान वमन की भारी सैनिक योग्यता से ही सम्पादित हुआ है।

से प —बहुत ही ठीक आज्ञा होती है अन्नदाता! उनमें समर कौशल अगाध है।

ह व —अच्छा तो आगे का विषय कहिए।

से प —अपना सैन बल सुगठित देख कर सेनापति फौलाद खाँ की अध्यक्षता में उसने मालवे पर चढ़ाई का प्रबंध किया। शेर शिकन भी साथ था किंतु हमारे बल को बहुत दृढ़ न जान कर स्वयं मिहिरकुल काश्मीर में ही रहा। वहाँ उसकी आत्मीय सेना मात्र रह गई। फौलाद अपना लश्कर ग्वालियर होते हुए सीधा मालवे ले आया। संवत् १५ में उसका कार्यारम्भ हुआ।

धि व —इस पर महाराजा ईशान ने क्या उपाय किया?

से प —उनको यह ज्ञात था कि हूण दल हमारे बल को तुच्छ समझता है अतएव उसके इसी विचार को बढ़ाने के लिये अपनी ओर से कादरता का स्वाँग दिखलाया गया।

ध दो —हम लोग छोटी सी हूण टुकड़ियों का भी सामना न करके भग खड़े होकर पहाड़ों और जंगलों की शरण लेते थे। उत्तर की ओर स्वयं महाराजा इशान रहे पूर्व में मैं पश्छिम में सेनापतिजी और दक्षिण में उनके युवराज शव।

वि प —डौल तो अच्छा लगाया।

से प —हूणों के रसद पानी का प्रबंध हम लोग बिगाड़ते रहे। उनकी रसद किसी ओर से भी घुसने से नहीं बचती थी। हमारे देश में तो प्रजा की सहायता उन्हें अप्राप्त थी ही अत्याचारों के कारण ग्वालियर की भी प्रजा छिपे छिपे उनकी शत्रु थी।

ह प —तो क्या उनके लश्कर में निराहार रहने का खटका उपस्थित था?

ध दो —खटका क्या कभी कभी उन्हें सचमुच भोजन अप्राप्त रहता था।

से प —इन्हीं कष्टों अथच हमारी दिखाऊ कादरता के घमंड से हूण दल सामरिक नीतियों की अधिक परवाह न करके पीछा करता हुआ आगे बढ़ता आया यहाँ तक कि वह दो ढाई महीनों में एक ऐसे स्थान में आ फंसा कि जहाँ आने का पतला पहाड़ी मार्ग हम लोगों ने पहले ही से सेना द्वारा बंद कर रक्खा था।

ध दो —उत्तर से कन्नौजी दल आ धमका और पूर्व पश्छिम से हम लोगों की फौज को फैल कर लड़ने का डौल था तथा हूण दल के लिए स्थानाभाव भी हुआ।

से प —योंही दक्षिण से उज्जयिनी की सेना लिए हुए युवराज शव पहुँचे कि चारों ओर से हूणों पर अस्त्र वर्षा होने लगी।

ध वो —दुष्ट भेड़ बकरी की भाँति कट गए। उनका किया कुछ भी न हुआ केवल प्रायः पचमांश सेना किसी प्रकार भाग भूग कर काश्मीर पहुँची होगी। शेर शिकन युक्ति से उसे निकाल ले गया।

से प —और इस दल का अधिकांश फौजावखाँ सहित उसी स्थान पर खेत रहा। महाराजा ईशान वमन अपनी सेना के साथ अब भी काश्मीर का मार्ग अवरुद्ध किए हुए उत्तरी पजाब में हैं।

ध वो —सम्राट का अधिकार अब काश्मीर छोड़ सारे हुए प्रा तों पर इस काल भी है। सन्धि के लिए उनकी ओर से शेर शिकन शर्व वमन के साथ आता ही होगा।

(शर्व वर्मन का प्रवेश)

श व —जै जै सम्राट्!

वि० व —(अभ्युत्थान देकर) आइये युवराज महाशय! विराजिए।

(शर्व वर्मन हरवद्ध न के पास सम्राट के निकट रक्खी हुई अच्छी कुर्सी पर बैठते हैं।)

ह व —कहिए शवजी! क्या शेर शिकन भी आगया?

श व —बाहर ही प्रस्तुत है। (सम्राट से) क्या बुलाया जावे?

वि० व —क्यों नहीं? (एक परिचारक जाकर उसे बुला लाता है)

शे शि —(कोर्निश करके) सम्राट! क्या अब सुलह का बात होगा?

वि व०—क्यों नहीं? अब आपको क्या कहना है?

शे शि —हुजर हमारा शहँशाह यह चाहता है कि काश्मीर और पंजाब स तनत में रहें बाकी हिंद में हुजूर और प्रकटादित्य जैसा चाहें बटवारा कर लेवें।

वि० व०—(धर्मघोष से) आपका क्या विचार है?

धर्मघोष—अन्नदाता ! अब विचार की आवश्यकता ही क्या है ? (शेर शिकन से) पंजाब तक तो हमारे सम्राट का अधिकार ही है काश्मीर के विषय में आप जो चाहिए विनती कीजिए।

शे शि —कश्मीर का बाबत हमको अर्ज मारूज करने का क्या जरूरत है ? वहाँ तो हमारा स तनत मौजूद ही है।

श घ —क्या वहाँ हमारा दल नहीं जा सकता ?

शे शि —हम गरूर तो करता नहीं मगर चाहता यही है कि आप वहाँ जाने का कोशिश जरूर करें।

ध दा —आपको समझ पडता होगा कि वहाँ हम लोग सफल न होंगे।

शे शि —इसका बाबत बढ़कर बातें करना सम्राट के सामने हमारा बदतमीजी होगा। बहर हाल समझ पडता है कि पंजाब छोडने पर सम्राट् तैयार नहीं है।

ह ष —किसी दशा में नहीं।

शे शि —यही हमारा शहँशाह भी समझता था। खैर कब्जा हाल का बिना पर शायद सु ह तरफैन को मंजूर होगा।

वि घ —अवश्य।

शे शि —यह बात हमारा शहँशाह भी मजूर करता है उस सु ह नामा पर शायद जानिबैन का पंजा लग आवेगा।

वि घ – मंजर है अब आप बाहर जा सकते हैं। (शेर शिकन कोर्निश करके जाता है।)

वृद्ध—इस विजय के सम्ब ध में कोई स्मारक तो बनना ही चाहिये।

वि घ —मैं तो दो स्मारकों के विचार में हूँ एक मंडोसर पर और दूसरा मध्यभारत में किसी स्थान पर।

धर्म दे। —जा आज्ञा। चिट्ठे कौन तैयार करैगा ?

ह्र ष —इसी लिये तो पडितवर दत्त को कष्ट दिया गया है। इनसे बढ़ कर कौन लिखेगा ?

वि ष —मुझे लाग विष्णु वर्द्धन और यशाधर्मन दानों नामों से पुकारते हैं अतएव इन्हीं दोनों नामों में से एक एक पर चिट्ठे बनें।

द —जो आज्ञा। उनमें बयान कैसा किया जाय ? बगालवाली बालादित्य की विजय का कथन ता शायद अनावश्यक हो।

वि ष —यही बात है। उसका कोइ मुख्य फल तो हुआ नहीं केवल मगध पयत गुप्त राज्य बढ़ गया। उसके विषय में भी प्रकटादित्य पर निक भवि य में सैन सन्धान करना ही होगा।

द —मै समझता हूँ कि सम्राट की उपाधि के साथ कथन हो तथा इतर सरदारों के बयान शाय अनावश्यक हों।

वि ष —सो ता ठई है क्यों न शव जी ?

श० व —और नहीं तो क्या ? मेरे विचार में काश्मीर पर सेना भेजने की आवश्यकता न पड़ेगी क्योंकि मध्य एशिया से रहा सहा हुआ बल एकत्र करके मिहिर फिर से युद्ध अवश्य करेगा। जब तक उसे सेन सन्धान में दो तीन वर्ष लगें तब तक इधर गुप्त बल से समझ लिया जावे।

वि ष शायद अब मिहिरकुल युद्धो मुख न भी हो तो आश्चर्य नहीं। कश्मीर के लिये भी मुझे विशेष कामना नहीं। इधर गुप्तों के पराजित हुए बिना वे भी अपने को सम्राट् समझते ही रहेंगे। अन्य प्रकट कारणों से भी उनसे मुठ भेड़ अनिवाय है।

श व —अवश्य।

क रा —अन्नदाता ! अब आमोद प्रमाद के विषय में भी आज्ञा होनी चाहिये।

वि ध —इसका प्रबंध एक मास के लिये हर और शंभ की अध्यक्षता में हो।

दृ व —कविराजजी ! अब आप भी अपनी कुछ रचना दरबार में सुनाइये।

क रा —जो आज्ञा; पहले दल सञ्चालन का वर्णन करता हूँ।

धरजत मीन लरजत कडलीस
    गरजतदिगसि धुर चलत जब दीह दल
कहलत कूरम दिगीस दहलत
    दिगदन्ति डहलत पारि जगत में खलभल।
दान कुञ्ज पावत सुनावत असीस
    जस गावत करत नहिं चारन चतुर कल।
पूरत प्रताप भूप दस दिसि चूरत
    औ वैरिन के तूरत करेजन धरनि तल॥ १॥
धावत प्रबल बल धारि कै सकल दल
    तासु परिपूरन प्रताप जग छायो है।
उदित बिलोकि जाहि कान्ति मारतण्ड सम
    पेखि निज हीनता दिवाकर लजायो है।
मानि जग हेत बिन काज निज तेज ताहि
    गोपन विचार दिनकर मन लायो है।
ताही सों प्रचंड धूरि धार कार की सहाय चाहि
    जुगुनू समान रूप आपनो बनायो है॥ २॥

दृ व—धन्य हो कविराजा ! आपकी जबान में शारदा का निवास है।

क रा —जिस दरबार में श्रीमान सरीखे नरेशहों और आप सरीखे पडित वहां हम लागों का भी छद सुनाने में कलेजा दूना हो जाता है।

ध दो —कवित्त आपक बहुत ही श्रेष्ठ हैं कि तु खेद है कि इतर काय भार से आज हम लोग एक से अधिक और छन्द सुन न सकेंगे।

क रा —देखिये महाशयजी! हम लोग आपही का यशोगान करते श्र ही से श्र ही रचना सुनाते और समय के अतिरिक्त कुछ मांगते भी नहीं। फिर भी आप महाशयों को समय दान में भी सकोच होने लगना है।

धि ध —नहीं कविराजजी! आप खेद न करें हम लोग आपको समय और धन दोनों का यथेच्छ दान करेंगे। यदि आज समयाभाव है तो सर्वेव थोड़े ही रहेगा।

क रा —अब मैं कृपार्थ हो गया। आज्ञानुसार श्रीमान की ही प्रशंसा में एक ही छ द पढ़ कर आज की बकवाद स्थगित करूगा।

जीतन संगर मै अरिजालन
आनन माहि बसी ललकार है।
दीनन के हित दच्छिन बाहु
बनी सुखदा सुर पादप डार है।
श्री जस बर्द्धन आजु तुही बसुधा
तल पै जस को अवतार है।
है भुवपाल तुही जग में
भुजदडन पै तव भूतल भार है॥ ३॥

पटाक्षेप

छठवाँ दृश्य

[स्थान पाटलिपुत्र प्रकटादित्य का मन्त्रणागार ।]

(प्रकटादित्य धर्म देव वीरसेन और दुर्धर्ष का प्रवेश)

प्र —कहिये धर्म देवजी ! अब तो बुरी बात उपस्थित हुई ।

ध दे०—है तो अवश्य किन्तु निराशा की कोइ बात नहीं है । क्यों वीरसेनजी ?

दु —भला मै कहता हूँ इस दिन का विचार पहले से क्यों न किया गया ? जब तक विष्णु वर्द्धन ने हूणों को पराजित नहीं कर लिया तब तक उसने इस ओर भूल कर भी मुख किया ।

वी से —भारत में इन दिनों तीन शक्तियाँ थीं अर्थात् बौद्ध हिन्दू और हूण । इनमें से जो एक दूसरी का जीत लेती वह तीसरी पर प्रभुत्व जमाना अवश्य चाहती । यही बात सामने आई ।

दु —बड़े सम्राट ने भी तो हूणों का जीता था ।

ध दे —उस काल अपने पास इतना बल कहाँ था कि मगध के आगे बढ़ते ? वह तो बड़े सम्राट् का सेन संचालन था कि जिसने हूणों पर विजय दिलाइ ।

प्र —अपनी वर्तमान शक्ति कब से बढ़ी है ?

वी से —यही प्रायः एक साल के भीतर जब कि हम लोग कलिंग और आसाम जीत चुके थे ।

प्र —यदि यह प्रयत्न किया जाता कि विष्णु वर्द्धन इतना न बढ़ पावे कि हूणों को ध्वस्त कर दवे तो कैसी ठहरती ?

ध दे —तो देखने में यही समझ पड़ता कि हम लोग मातृ भूमि और देशी भाइयों के शत्रु हूणों के अ तरग मित्र हैं । किसी

समय स्वामी उनके साथी थे इसी बात का कलक गुप्त साम्रा य के मत्थे पर कम नहीं है।

तु —इस बात का तो वर्षों से पता भी नहीं रहा है।

वी से —इससे क्या होता है? लोगों का मिथ्या स देह ही दूर होना कठिन है यदि उसका कोई आधार मिल जाता तो वह हद के बाहर बढ़ जाता।

प्र —माना कि बढ़ जाता तो उसका फल क्या होता?

ध वे —सम्राट के बौद्ध मतावलंबी होने तथा प्रजा में हि दुओं की भारी जन सख्या से यह साम्रा य लोक प्रिय कम है। इस कारण से हि दुओं ने मिल कर मध्य भारत में अपना प्रभाव बढ़ाया जो अब साम्रा य के रूप में हो गया है।

वी से —अब यदि हम इस नव विकसित शक्ति को नि कारण हूणों से भी बल से न लड़ने दत तो सम्भव था कि अपनी ही प्रजा अथवा सेना में विद्रोह का झण्डा खड़ा हो जाता; अतएव हूणों की सहायता न करके प्रजा की दृष्टि में हम लोग कम से कम देश प्रेमी तो बने रह।

तु —शायद यह भी निश्चय न हो कि ये लोग हूणों को इतनी सुगमता से जीत लगे।

वी से —यह भी बात थी। समझ यही पड़ता था कि दोनों शक्तियाँ आपस में भिड़कर बलहीन हो जावगी जिससे अपने प्रभाव की और भी वृद्धि होगी। ।यह कौन जानता था कि महाराजा ईशान वर्मन का समर कौशल ऐसा बढ़ेगा जिसकी दीपशिखा में सारा हूण बल पतग हो जावेगा?

प्र —तो अब क्या योग्य है?

वी से —मेरी समझ में विष्णु वर्द्धन का यह कहना अनुचित है कि सारा मगध बंगाल और आसाम उनके साम्राज्य में

आजावें और जगत्प्रसिद्ध गुप्त सम्राट् करद भूपाल मात्र बन जावें।

प्र —कुछ दिन पितृ चरण ने भी ऐसी बात मान कर उचित समय की प्रतीक्षा की थी।

ध द —उसकाल हूण दल ढाई लाख था और अपना एक लक्ष भी नहीं।

प्र —और अब?

वी से —अब तो दोनों दल संख्या में प्रायः समान हैं। जब वे हमको करद बनाना चाहते हैं तो युद्ध करने से संसार में अपयश का भी भय नहीं है।

दुर्धष—मेरी समझ में मृगदाव में जो श्रीमान का शव से मनो ाव हुआ उसी के कारण उसने यह उपद्रव खड़ा किया है।

प्र —सम्भव यह भी है कि तु इसका धीत नहीं होती समझ ऐसा पड़ता है कि विष्णु वर्द्धन भी अपने को सम्राट कहने लगा है सो उत्तरी भारत में दो साम्राज्यों का समाना अनुचित मान कर उसने यह बखेड़ा उठाया है।

ध द —यही बात है। फिर कारण कोई भी हो मामला जो है सो सामने है।

प्र —कर तो कुछ अधिक माँगा जाता नहीं केवल प्रभाव की बात है।

वी से —दीनबन्धु! शान ही का मामला क्या कम है? यही हम को कर क्यों न देवे? अभी मिहिर कुल नष्ट तो हुआ नहीं केवल दब गया है। उनका प्रबल शत्रु सर ही पर है। यहाँ अपने लिए एक ही शत्रु है और उनके दोनों ओर दो प्रस्तुत हैं।

ध दे —आपकी सम्मति में सम्राट के लिए दबना ठीक नहीं।

थी से —बि कुल नहीं।

प्र —मेरी समझ में थोड़ी बात के लिए विशेष जोखिम लेने की क्या आवश्यकता है ? कहने को तो हम अपने को सम्राट कहते हैं और गुप्त घराने के प्राचीन गौरव के आधार पर ससार भी इसे प्रसन्नता पूर्वक मान रहा है किंतु अधिकार केवल मगध और बगाल पर है तथा आसाम और कलिंग में कुछ प्रवेश है।

तु —उधर उनके पास देश अवश्य अधिक है।

प्र —केवल इतना ही नहीं वरन समय के साथ उनकी सेना और शक्ति में स्वाभाविक वृ द्ध होगी तथा रा य की कमी से हम उतनी कर न सकेंगे अतएव दूरदर्शिता से इस झगड़े में मुझे क याण नहीं देख पड़ता। हिन्दू होने से प्रजा में उनका अधिकार प्रिय भी अधिक है।

थी से यदि ार्मिक झमेला इतना दृढ है तो इसी को छोड़ कर लोकप्रियता क्यों न ग्रहण की जावे ?

ध दे —एक इतनी ही सी बात पर तो बड़े सम्राट ने बौद्ध भिक्षु होना पसंद किया किंतु ईशान वर्मन द्वारा अर्पित साम्रा य न लिया।

थी से —मेरी समझ में तो रा य प्रणाली को धर्म से इतना न्यून समझना अनुचित है।

प्र —अब इस विषय पर विचार ही वृथा है क्योंकि यदि मेरे लिए यही प्रश्न उठता तो शायद मैं बौद्ध भिक्षु बनना पसद न करता। अब तो यह बात सामने है नहीं।

ध दे —इस काल तो साम्रा य और भूपाल की पद्धियों पर सोचना है।

वी से —मेरा दृढ़ विचार है कि इस प्रश्न पर सेना और प्रजा दोनों अपनी सहायता करेंगी।

प्र —किंतु ईशान वमन के बराबर समर कौशल आज दिन भारत भर में है किसमें?

वी से —अभिमान करना तो झक मारना है किन्तु वर्षों की राज सेवा तथा बड़े सम्राट की सामरिक शिक्षा का मुझ पर क्या कुछ भी प्रभाव नहीं पड़ा होगा? मैं प्रण करके कहता हूँ कि यदि ईशान वमन का बल एक बार ध्वस्त करके दिखला न दूं तो यह कृपाण धारण न करूं।

तु —जब वीरसेनजी इतनी दृढ़ता से युद्ध माँग रहे हैं तो सम्राट् को भी अपने सहायकों की उमंग घटानी न चाहिए।

ध दे —मेरा भी यही विचार है।

प्र —तुम सब तो हुए हो पागल, अपने रा य के विस्तार को बिना समझे हुए पहाड़ में सर मारना चाहते हो। फल केवल इतना होगा कि अभी तो नाम मात्र को कर देने का प्रश्न है कि तु युद्धान तर हजारों सिपाही कटने पर भी आधा रा य तक जावेगा। इस आरम्भ में प्राण संकट तक असम्भव नहीं है।

वी से —जब तक मै जीवित हूँ तब तक तो ऐसा तीन काल में भी नहीं हो सकता।

प्र —गोपराज भी ऐसा ही कहते थे किंतु उनके पीछे भी कुछ हुआ?

तु —सेनापतिजी! अब चुपके हो जाइये आपने सेवक धर्म को पूर्णतया निभा दिया।

ध दे —बेशक अंत में स्वामी स्वामी है।

वी से —आप लोगों के कथन बिलकुल यथार्थ हैं किन्तु मै क्या करूँ? आज तक का चिरकालीन विजयी सेनापति

क्या उन नौबढ़ियों के सामने सिर झुकाऊगा ? मुझे तो मरना सुखद है परंतु इतना पतन शतधा असह्य होगा। आपके सामने अभी मैंने ईशान के जीतने का प्रण किया है उसकी पूर्ति भी होनी है।

प्र —वीरसेन ! आपके कथनों में उमंग और साहि य की मात्रायें मुझे प्रचुरता से दख पड़ती हैं कि तु उनमें लौकिक अनुभव की कमी है।

वी से —(हाथ जोड़ कर) अपराध क्षमा हो अन्नदाता ! अब आपको न सेना की आवश्यकता है न सेनापति की वरन आज से केवल द्र य दकर शत्रु साधना है। मैं देख रहा हूँ कि मेरे दर्शाये हुए मार्ग में कंटक हैं तथा स्वामी अपनी नीति से याव जीवन निष्कंटक रहेंगे रहा साम्राज्य उसकी परवाह किसको है ?

ध दंव—वीरसेन ! क्या बक रहे हो ? जबान सम्हालो।

वी से —मैं विवश हूँ मुफ्त का वेतन न भोगूँगा (हाथ जोड़ कर) स्वामिन ! अपराध क्षमा हो अब मुझे छुट्टी मिले ; जहाँ सींग समायेंगे जाऊंगा। शत्रु का दप यथासाध्य चूर्ण करूगा।

प्र —शाबाश वीरसेन ! वीर मिले तो ऐसा। यदि मैं विजय की थोड़ी भी आशा देखता तो तुम्हारा उत्साह भंग न करता।

वी से —मैं सम्राट से असंतुष्ट वि कुल नहीं हूँ कि तु प्राण रहे चाहे जावे शत्रु मंडली से दबगा कभी नहीं। अब गौड़ जाने की आज्ञा मिले।

प्र —यदि वहाँ भी युद्ध मन्त्रणा स्थिर न हुई ?

वी से —तो यह शरीर अग्नि देवता के अर्पण कर दू गा किन्तु

शूर शिरोमणि सम्राट बालादित्य की प्रार्थना भंग करने वाले ईशान का अनुगामी न बनेगा।

प्र —किंतु स्वयं उन्होंने तो काका ईशान को आशीर्वाद दिया था।

वी से —यह उनकी महत्ता थी जो ईशान के भ्रातृ विरोधी कार्य का मार्जन नहीं करती।

प्र —यद्यपि मैं इस कथन से सहमत नहीं और तुम को छोड़ना भी नहीं चाहता तथापि गौड़ जाने की आज्ञा देता हूँ क्योंकि देखता हूँ कि तुम यहाँ प्रसन्न नहीं रह सकते।

वी से —बड़ी गुण ग्राहकता हुई (सम्राट् को साष्टांग प्रणाम करके तथा इतरों से गले मिल कर प्रस्थान को उद्यत होना।)

प्र —तो वीरसेन जी! मैं तुम्हारे ज्येष्ठ पुत्र शत्रु शमन को अपना सेनापति नियत करता हूँ कनिष्ठ पुत्र को सहायतार्थ गौड़ ले जावो यदि कभी आवश्यकता पड़ जावे तो यहाँ का भी काम अपना ही समझना।

वी से —जो आज्ञा। मैं तो अपने सेवक धर्म से पराङ्मुख होगया, किंतु स्वामी को देखिए कि अपने धर्म से न हटे। (सम्राट् की प्रदक्षिणा करके प्रस्थान)

प्र —तो मन्त्रीजी! काका ईशान वर्मन के पास स्वीकृति का उत्तर प्रेम भाव से लिख भेजिए, वीरसेन के खोने का मुझे बहुत क्लेश है।

ध दे —हम लोगों को भी किंतु क्या किया जावे? विचार बहुत हो चुका है अब भेजना ही ठीक है। वीरसेन अब भी अपने ही रहे, दशा परिवर्तन मात्र का खेद शेष है।

सु —हा दुःख।

पटाक्षेप

सातवाँ दृश्य

[स्थान उ जयिनी—धम नाथ का उपवन]

(राजकुमारी और सखी का प्रवेश)

सखी—राजकुमारीजी ! आजकल चिरकाल से इस श्रीमुख की कान्ति क्यों मलीन है ? बलिजाऊं क्या क्लेश चित्त को चैन नहीं देता ?

रा कु —बहिन तुम से क्या छिपाना है ? पहले तो देश भक्ति के उ माद में मैंने प्रेम को भी तु छ मान लिया कि तु अब वह पूरा बदला निकाल रहा है। यह नहीं विदित था कि मेरा भी मन हाथ से वे हाथ होने लगेगा।

स —क्षमा करना ।तुम तो विद्या और बुद्धि के गर्व में कभी कभी ऐसी चूर्ण हो जाती हो कि आपे तक को भूल पड़ती हो। ऐसी कौनसी शीघ्रता पड़ी थी कि प्राण यारे तक को देश प्रेम का पाठ पढ़ा बैठीं ? कुछ मुझी से पूंछ लेतीं तो क्या बिगड़ जाता ?

रा कु —बिगड़ता यही कि वियोगानल में दग्ध होना न पड़ता।

स —यही बात थी। वे तो स्वयं देशभक्ति के पैत्रिक अवतार हैं। आपको उ हें उसकी शिक्षा देने से क्या वृद्धि होती और क्या हुई ? यदि आपका विवाह पहले हो जाता तो क्या वे हूण पराभव का प्रयत्न छोड़ बैठते ?

रा कु —अब पछिताये क्या हुआ जब चिड़िया चुग गईं खेत।

स —यह भी दूसरी भूल है चिड़िया खेत क्या चुग गई ? अभी हुआ ही क्या है ? यही न कि विवाह में कुछ काल की देर हो गई ? इससे होना जाना क्या है ?

रा कु —हाय सखी ! यदि मेरा पूरा हाल जानतीं तो ऐसे हृदयहीन कथन काहे को करतीं ?

(गाती है)

सखीरी हिय धीरज नहिं आवै
सदा भ्रमन दिसि बिन्सि पिया को
चित चंचल भरमावै ॥सखी ॥
जो जनती परिणाम प्रेम का ऐसी चोट चलावै
तौ कत यहि मारग पगु धरती
नहीं कछु अब भावै ॥ सखीरी ॥

सखी—वीर ! धीरज धर । (गाती है)

सुन्यो सखि अब तौ उन पन पायो ।
तो ढिग ते चलि आन बाल दिसि
नेक नहीं चित चान्यो ॥ सुन्यो ॥
करि अनेक उद्योग सैन सजि प्रबल शत्रु दल घाल्यो
पूरण जीति हुण दल सों लहि
बैरिन को उरसायो ॥ सुन्यो ॥

रा कु —यह तो मैं भी जानती हूँ किन्तु (गाती है)

कह लैगे बरबस मन मोर ?
मै जानी चिर प्रेम निबहिहैं बनि छिन मै चितचोर ॥कह ॥
तब तौ करीं अनेकन बतियाँ जिनकी ओर न छोर
बातन जाय मोहि मन लीन्हों
बीर बड़े बर जोर ॥ कह लैगे ॥
जब ते गये न सुधि कछु लीन्हीं बिरह बढ़े घन घोर
कहा कहौं छिन धीर न आवै
तड़पत हियो अथोर ॥ कह लैगे ॥

स —प्यारी ! इतनी उतावली क्यों होती है ? अब तो समय आ ही गया है । कुछ काल और धैर्य धारण कर । एक

दिन तो वेश प्रेम उतना बढ़ा कर लिया था अब उसकी भी तो कुछ लाज रख।

रा कु —सखी! मै तो सब कुछ लाज रक्खू किंतु मन वश में आता ही नहीं। मै इस दुष्ट को सैकड़ों कारणों और दृष्टान्तों से समझाने के प्रयत्न कर चुकी हूँ किन्तु क्या करू? समझता नहीं।

स —मैं भी जानती हूँ कि प्रेम का मार्ग अगाध समुद्र है तलवार की धार है जलती हुइ ज्वाला है और क्या क्या नहीं है? मन का वेग बड़े ऋषि मुनि रोक नहीं पाये हैं हम तुम तो साधारण युवतियाँ हैं। कहने को तुम्हें समझाती हूँ किंतु भीतर से मेरा मन भी तुम्हारे ही समान चञ्चल है। करू तो क्या करू?

रा कु —अच्छा सखी यह भी बात है। फिर मुझीको क्या ज्ञानोपदेश करती थीं?

स —समझाती न तो क्या बिकलता बढ़ाने की युक्तियाँ बतलाने लगती?

राज कु —उस दिन तो अपनी सम्मति देने में तुमने बड़ी शान दिखलाई थी।

स —राजकुमारी जी! कुछ तो लोक लाज निभानी ही पड़ती है। वही उदासीनता और भी काँटे सी चुभती है कि कहीं प्राण प्यारे का चित्त फिर न गया हो।

रा कु —ऐसा नहीं हो सकता, मै सुभद्र को चिरकाल से जानती हूँ, बड़ा ही धीर पुरुष और सौजन्य मूर्ति है। भद्रत्व उसके मुख पर सदैव नृत्य किया करता है।

स —इन्हीं कारणों से और भी चित्त उनके चरणों में रक्खा रहता है।

रा० कु०—उस दिन मैंने कहा था कि माताजी से कह सुन कर किसी प्रकार उनका यहाँ निमंत्रण कराओ।

स०—सखी अच्छी सुध दिलाई मेरी बात मान कर माताजी ने तो काका दत्त से कह कर निमंत्रण भिजवाया भी है आशा है कि दो चार दिनों में आते ही हों। अरे उधर तो देखिए; मुझे कुछ उन्हीं की सी भाँति समझ पड़ी है।

रा० कु०—अब तो तुम पागल होती हुई देख पड़ती हो इतनी शीघ्रता से कहाँ आये जाते हैं?

स०—चलो उधर चल तो सही मुझे भ्रम नहीं हुआ है।

(दोनों इधर उधर लता कुंजों में खोजती हैं शर्व वर्मन का प्रवेश)

श० व०—अच्छा राजकुमारीजी! आज आपके अनायास ही दर्शन हो गये; कहिये प्रसन्न तो हैं?

स०—आपकी बला से कैसी भी हों आपको क्या चिन्ता?

श० व०—सखीजी! ऐसा प्रचण्ड कोप क्यों हुआ? आज्ञा पालन में साफल्य की बधाई तो दूर रही ऊपर से कोपानल की ज्वालाएं धधकने लगीं।

स०—यदि कोई सुधी महत् कार्य भी करता है तो क्या मनुष्य नहीं रह जाता? साधारण सिपाही तक युद्ध स्थान की ओर प्रस्थान करते हुए बाल बच्चों को एक बार देख जाते हैं अथवा पत्र तो डाल ही देते हैं।

श० व०—अच्छा यह बात थी। मैं नहीं जानता था कि मुझे पत्र व्यवहार का अधिकार मिल चुका है।

रा० कु०—सखी इन भोले भाले युवराज को क्यों दिक करती हो? पत्र प्रेषण करके ये विचारे भला औचित्य का सीमोल्लंघन कैसे कर जाते? इन्हें तो नैन बाण चला कर

किसी को घायल करने मात्र में औचित्य का उदाहरण मिलता है।

स —उस दिन विश्वनाथजी के दरबार में क्रुद्धों की लड़ी टूट जाती तो शायद अनौचित्य का पहाड़ आ गिरता।

श व —जब ऐसे श्रोता उपस्थित हों तब दो एक शब्द कह डालने में क्या पातक हो सकता है ?

रा कु —हाँ सखी ! इनका कौन दोष था ? बेचारे शैव भक्ति के प्रभाव में बह कर झटपट मंदिर में घुस गये कि पहले मेरे पूजन से कहीं मूर्ति जूठी न हो जावै।

श व —अच्छा सखी मैं ही हारा सही। आज्ञा पालन भी हो चुका। कहिये अब तो कोई बाधा शेष नहीं है ?

रा कु —सुभद्र को न जाने कहाँ छोड़ आये। मेरी सखी को निराश करके मुझे भी स्वार्थी बनने के पाप में डाला चाहते हैं।

श व —नहीं देवीजी ! सुभद्र मेरे साथ ही हैं। सखीजी की प्रसन्नता का मुझे पूरा ध्यान था।

स —मै तो समझती हूँ कि काकाजी के द्वारा यह समाचार पिता जी को सूचित कराया जावै।

रा कु —काकाजी पहले ही उन्हें इस विषय में अभिज्ञ कर चुके हैं। आशा है कि पूज्य महाराजा की अनुमति प्राप्त हो चुकी होगी।

श व —काकाजी इस सम्बन्ध से पूर्णतया प्रसन्न हैं।

स —तो पूज्य पिताजी का आशीर्वाद भी ले लीजिये।

(राजकुमारी और सखी का प्रस्थान धर्मदोष का राजकुमारी सहित प्रवेश)

श व —काकाजी प्रणाम करता हूँ।

ध दो —प्रसन्न रहो वत्स! पहले ही मिलने पर भाई ईशान ने मुझे सम्ब धी कह कर पुकारा था। मैं बालक बालिकाओं की पूर्ण स्वच्छ दता का पक्षी हूँ। यही विचार भाई ईशान के हैं। यह सुन कर मुझे असीम आनन्द प्राप्त हुआ कि हम दोनों के हार्दिक प्रेम से असम्बद्ध भी हमारे स तानों में पूर्ण सौहार्द्र उ पन्न हुआ है। यह जान कर और भी प्रसन्नता हुई कि तुम दोनों ने अपने सम्ब ध का पूर्ण प्रस्फुरण दशोद्धार पर अवलबित किया था। ईश्वर ने वह सुदिन भी दिखला दिया। तुम्हारी विद्या वीरता सौज य पितृ प्रेम दशानुराग आदि प्रशंसनीय हैं। मैंने भी अपनी कन्या को शस्त्र शास्त्र का अभ्यास यथा साध्य कराया है और चरित्र प्रस्फुरन में भी उसे सहायता दी है। आशा है कि तुम दोनों का प्रेम सदैव नवीन बना रहेगा। मैं हृदय से आशीर्वाद देता हूँ और चाहता हूँ कि यह विवाह अति शीघ्र शुभ मुहूर्त पर हो जावे।

(दोनों धर्मदेव को प्रणाम करते हैं)

[यवनिका पतन]

तीसरा अक

प्रथम दृश्य

[स्थान कान्यकु ‍ ा ईशान घमन का दरबार]

(ईशान वर्मन सिंहासनासीन हैं धर्मदोष दत्त शर्व सेनापति
और कविराज कुर्सियों पर बैठे हैं परिचारक गण
यथा स्थान खड़े हैं)

ध दो —आज हमारी प्राचीन म त्रणा पूर्णतया से भी अधिक सफल हुई है।

ई व —जिस दिन मैंने आपसे ग्वालियर में आकर बात की थी उस दिन कौन समझ सकता था कि उससे इतने महान फल प्राप्त होंगे !

दत्त—अपने नवीन वैवाहिक सम्ब ध ने उस मित्रता सुमन को और भी सौरभित कर दिया है।

क रा —जब गुप्त सम्राटों द्वारा जुड़ा हुआ नाता उतना सफल हुआ था तब अपना ही वास्तविक सम्बन्ध क्यों न फलता ? आखिर हूण बल नष्ट हो ही गया।

ई व —सच कहते हो कविराज ! मैंने तो पहले ही कहा था कि मिहिरकुल इतना उद्धत है कि हम लोगों को कश्मीर पर आक्रमण करने की आवश्यकता न पड़ेगी।

ध दो —वही बात हुई भी और मजा यह आया कि उसने मध्य एशिया का भी सारा हूण सैनिक बल मगा कर पंजाब ही में स्वाहा करा दिया।

शं व —हम लोगों को कश्मीर मुफ्त में मिल गया।

क रा —मिहिरकुल और शेरशिकन दोनों स्वयं महाराजा के हाथ से युद्ध में मारे गये यह और भी कीर्ति वर्द्धक हुआ।

सेनापति—मैं तो कहने को सेनापति हूँ वास्तविक सैन संचालन तो स्वामी ही करते हैं। इस अन्तिम हूण पराजय में आपका कौशल देख कर मुझे भी दाँतों तले उंगली दबानी पड़ी।

दत्त—अब तो मैं समझता हूँ कि युद्धकर्ता हूण दल अशेष हो गया?

ई व —समझ यही पड़ता है।

क रा —अभी हमारे युवराज का विवाह हुए एक साल भी नहीं हुआ और इतने ही बीच में सारा हूण दल अशेष है। लोग साल भर के अन्दर वाली घटनाओं का फलाफल सारे वैवाहिक जीवन पर मानते हैं। प्रारम्भ परमोत्कृष्ट है।

ई व —मुझे तो भाई धर्मदोष का नाम ही सारे जीवन भर फला है। फिर भी इन फलाफल सम्बन्धी विचारों को मैं नितान्त भ्रम मूलक मानता हूँ (धर्मदोष से) हाँ इतना अवश्य हुआ कि जिस दिन हूणों पर विजय मिली उसी दिन परमेश्वर ने मेरे पौत्र अथच आपके दौहित्र को जन्म दिया।

ध दो —यह बात बड़े ही मार्के की हुई।

दत्त—अच्छा मेरे दौहित्र का नाम क्या रक्खा जावेगा?

ई व —मुझे तो वह अवन्ती की राजकुमारी से प्राप्त हुआ है सो अवन्ति वर्मन ही क्यों न कहा जावे?

दत्त—इस नाम से तो हमारा आपका सम्बन्ध भी प्रदर्शित हो रहा है। क्या ही शुभ नाम है?

ध वो —अवश्य। अवश्य।

क रा —अब हमारे स्वामी को सम्राट नहीं नहीं महाराजा पद शोभा देता है।

ई व —हमारे कविराजा का चांच-य श्लाघ्य है। क्या कभी कभी आप जान बूझ कर भी भूल कर जाते हैं?

से प —मै समझता हूं कि अब तो हम लोग शत्रु हीन हैं।

ई० व —हैं बहुत कुछ कि तु वीरसेन के भावी प्रयत्नों को मै तुच्छ नहीं समझता? वह उत्कृष्ट सेनापति है और समर कौशल में भूल नहीं करता।

ध वो —तो क्या गौड गुप्तों से भावी मुठभेड आपको सम्भव समझ पडती है?

ई व – मै तो उसे निश्चित प्राय मानता हूँ। वीरसेन स्वय मेरा घोर शत्रु है महाराजा तृतीय कुमार गुप्त अच्छे बहादुर हैं तथा उनके पुत्र दामोदर और पौत्र महासेन प्रचड युद्ध कर्ता हैं। हमारे निजो सम्ब धी होकर मागध गुप्तों का नाम डूबते हुए इन तीनों से न देखा जावेगा विशेष करके ऐसी दशा में जब कि प्राचीन गुप्त सेनापति वीरसेन इतना तुला बैठा है कि युद्धाभाव में अग्नि प्रवेश को तैयार है।

से प —फिर भी गौड गुप्तों में इतना सै य बल नहीं देखता कि वे हमारा सामना कर सकें।

ई व —अभी तो ऐसा ही है कि तु कौशल से सभी सामग्री जुट सकती है।

से प —तो अभी से कोइ युक्ति क्यों न की जावे?

दस—यह तो कंस कैसा मामला होगा। गौड गुप्त हैं हीं क्या वस्तु? युद्ध करेंगे तो देखा जावेगा।

ई व —बहुत योग्य सम्मति है। यह मामला इतना गहन देख

नहीं पड़ता कि अभी से इसकी चिन्ता की जावे। आज आमोद का दिन है।

दत्त—तो क्या कविराज को अवसर दिया जावे?

श व —मैं तो यही योग्य समझता हूँ।

इ व —क्या हर्ज है।

क रा —बड़ी कृपा पड़ता है।

जै जै गुप्त कुल ईशान।
जनम यद्यपि लियो मौखरि बंस में बलवान। जै जै
तदपि निज बल बुद्धि सों फैलाय प्रबल प्रताप
कियो शोभित मातृ कुल हू भानु से है आप।
जज गुप्त बंस कलाप।
भये विश्वामित्र जह राजर्षि कनउज देस
तहाँ तुमहूँ समै लहि कै कियो आसन बेस।
जे जै गुप्त बंसनरेस।
भये हौ यहि काल प्रभु राणीयता के मूल
गह कीने हुथा सीस स्वदेस की धरि धूल।
ज जै गुप्त बंस अतूल।

ध दे —वाह कविराज! क्या कहने! अब यदि गुप्त मौखरि वंश का मिलित विवरण भी कर देते तो क्या ही अच्छा था?

क रा —बड़ी गुण ग्राहकता हुई अन्नदाता! मिलित वंश वर्णन भी सुनिये।

कुल थापक श्रीन द घटो कच प्रबल प्रतापी
गुप्त बंस की नीव परम दृढ़ता सों थापी।
जौन बंस को अस बिसाल भारत महिं फैलो
राख्या द्वैशत वष अखिल अरि मुख जेहि मैलो॥ १॥

निज पिता पितामह को प्रबल राज और बरधित कियो
सतजुग समान महिपालि किय परजा को पुलकित हियो ॥ १० ॥
कछु काल बीत बृद्ध भूप कुमार गुप्त ललाम
अवलोकि सुत सुस्कंदगुप्त प्रताप तेजस धाम ।
निज राजपद कहँ त्यागि ताहि भुवाल बरबस कीन्ह
तब स्कन्द नृप साम्राज्य भारहि बिबस निज सिर लीन्ह ॥ ११ ॥
फैलाय प्रबल प्रताप चहुँदिसि मर्दि अरि समुदाय
सासान हूण कुसान भूपन मुखनि कारिख लाय ।
द्वै लक्ष दल आक्रमणकारी युद्ध में बिचलाय
दु लाख ही निज सैन बल किय गर्द बर्द बनाय ॥ १२ ॥
को भयो योरुप एशिया में और दूजा बीर ?
जो बेग लखि कै हूण दल को रहत धारे धीर ।
रणधीर जग सुस्कंद गुप्तहि भयो बीर भुवाल
जेहि हूण बल करि चूर्ण तिन सों लही जीति बिसाल ॥ १३ ॥
भे पीछे पुरगुप्त फिरि बालादित्य प्रवीन
जिन बुध को मत ग्रहण करि कियो ताहि फिरि पीन ॥ १४ ॥
दुतिय कुमारहु गुप्त पुनि भा बुध गुप्त नृपाल
तासु तथागत गुप्त सुत राखी साह चाल ॥ १५ ॥
बालादित्य दुतीय कछु फैलायो परताप
पै तोरमानदै मिहिर कुल ताहि हरायो आप ॥ १६ ॥
यदपि मिहिर कुल भूप को बालादित्य बहोरि
किय बन्दी तदपि सक्यो नहीं हूण बल तोरि ॥ १७ ॥
राजपाट सब त्यागि तेहि बौद्ध भिक्षु पद लीन
प्रकटादित्य कुपुत्र कह बिलखि सिंहासन दीन ॥ १८ ॥
इहिबिधि गुप्त बल छीन ह्वै सक्यो न थिरि बहुकाल
कन्याबंस प्रताप तब फून्यो फल्यो बिसाल ॥ १९ ॥

इ ब —सम्राट स्कंद गुप्त की कितनी प्रशंसा हुई है किन्तु यह उचित से चाहे कम हो अधिक नहीं है।

ध दा —अवश्य ; जगद् विजयी हूणों से भारत रक्षा पहले उन्हीं ने की। मर स्वामी की कीर्ति कुछ कम कथित है।

दत्त—भाई साहब ! हमारे कविराज केवल राजनीतिक पक्ष से कथन करते हैं धार्मिक से नहीं।

क रा —यही बात है अन्नदाता ! अब तो मौखरिवंश का भी कुछ वर्णन सुन लीजिये (पढ़ता है)

गई हूण गुप्ता सविधि याही मौखरिवंस।
नृप आदित बरमन तिया हूस जस अधंस ॥ २ ॥
प्रिय पौत्र तिन को भयो अग इसान बरमन भूप
जाके समान नरेस कबहूँ लख्यो नाहि अनूप।
बालकपनहि सों रण प्रम बढ़ाय अति उद् ड
राणीयता परत कु परमानित करी निजचंड ॥ २१ ॥
नरपाल बालादि य को जेहि प्रभावल चकचौंधि
विसिमत अचम्भित करि दियो निज बुद्धि साहस कौंधि।

गुनि देस हित—जेहि जसो ररमन नैरय कह भुवपाल करि
स्वाथ याग महान् दिखरायो अनूप बिसाल ॥२२॥

गादी उदयाचल पै होत ही उदित
ईश भूपति प्रताप दिन नाथ सो पसारयो है।
तारागन जैसे छिपि गए और भूप
रिपि जूथ कुमुदिनि से उलूक से निहारयो है।
मीत समुदाय खिले कोकी कोक कौल जैसे
जिनको प्रकास बहुँ ओरन दिखानो है।
सीतल सुमन्द औ सुग ध बहै याय वायु
दुख को न नाम कहूँ देस मैं लखानो है ॥२३॥

हूणों को पराजित अवश्य किया किंतु वह बल अब जाकर नष्ट हुआ है।

क रा —ध य है आपके पांडि य को।

ई व —इसमें शायद कोई धींगा धींगी समझे।

ध दो —यों तो लोग ईश्वरीय रचना में भी दोष निकाल दते हैं।

क रा —और नहीं तो क्या भला मै किस गिनती में हूँ ? किंतु कथन मेरा अतक्य प्रमाणित हो चुका है।

ई व —अच्छा भाई मैं ही हारा सही।

ध दो —धन्य कविराज! आपने हूण विजेता तक को जीत लिया।

दत्त—सरस्वती और दुर्गा का यह पुराना झगड़ा प्रलय पर्यंत चलेगा।

(पटाक्षेप)

दृश्य दूसरा

[स्थान गौड़ राजधानी गौड़ गुप्त का अंतरंग सभा भवन]

(महाराजा कुमारगुप्त वीरसेन महासेन और सेनापति का प्रवेश)

म कु गु —वीरसेनजी! आपने इस रा य पर बड़ी कृपा की है। आपके शुभागमन से इस वंश का यश बहुत बढ़ा है।

वी से —यह श्रीमान की गुणज्ञता है। भला मै किस गिनती में आ सकता हूँ कि जिससे इतने बड़े राजवंश की मान वृद्धि हो सके ?

महासेन—आपको हमारे पू य बाबाजी के उत्साह और शौर्य का इतना भरोसा था कि इनके युद्धार्थ सन्नद्ध न होने की दशा में आपने पावक मुख में प्रवेश तक करने का प्रण कर डाला। ऐसा शौर्य शत मुख से श्लाघ्य है।

वी से —क्या मेरे ऐसे विचार आपको पहले ही से विदित हो चुके हैं ?

कु गु —आप यहाँ पीछे पधारे हैं प्रत्युत आपका प्र येक श द पहले ही पहुँच चुका है । ऐसे यशस्वी युद्ध कर्ता के पदार्पण से मै अपने रा य को ध य मानता हू । महाराज प्रक ादि य ने पितृ द्रोही की अधीनता स्वीकार करली किंतु आपने वर्तमान भी नहीं एक भूतपूर्व स्वामी के शत्रु की अ ीनता न मानी धन्य है आपकी स्वामि भक्ति को ।

वी से —(हाथ जोड़ कर) ो ाब धु श्रीमान के अमोघ स कार से मै बहुत ही अधिक अनुगृहीत हू मै इस गद्दी की सदैव पितृ भक्ति के साथ सेवा करूगा ।

सेनापति—स्वामी से एक विनती मेरी भी है ।

कु गु —हाँ कहो क्या ाहते हो ?

से प —ऐसे सुयशी और स्वामि भक्त सैनेश की सेवा करने में मै भी अपने को कृताथ मानू गा । मेरी यही प्रार्थना है कि आज से वीरसेनजी सेनापति होवें और मै उप सेनापति बनाया जाऊ ।

कु गु —आप अपने उच्च पद से ाग पत्र क्यों देते हैं ?

वी से —सेनापति जी से में प्रार्थना करता हू कि मेरे लिए आप कष्ट न उठावें मैं केवल युद्ध के अवसर पर समर कौशल की मन्त्रणा द दिया करूगा ।

से प —(हाथ जोड़ कर) ऐसे रणकुशल तथा विजयी एव आसाम और कलिंग के जीतने वाले को भी पाकर यदि उसके सेनापतित्व से वञ्चित किया जाऊ तो मैं अपने ऊपर स्वामी तथा आप दोनों की अनुकम्पा समझूँगा ।

कु गु —आपके उच्चाशय पूर्ण विचारों से मैं बहुत प्रसन्न हुआ। आशा करता हूं कि वीरसेनजी की सहायता से हमारे राज्य की ऐसी भारी उन्नति होगी कि उप सेनापति भी होकर आप अपने पहले के पद से गुरुतर अधिकार के भागी होंगे।

से प —बड़ी दया हुई अन्नदाता! यही मेरा भी विचार है। सेवकों को राज्य वृद्धि पर भी ध्यान रखना चाहिए केवल अपने ही पर नहीं।

(वीरसेन और सेनापति उठ कर महाराजा की अभ्यर्थना करते हैं)

महासेन—अब कहिए वीरसेनजी! इस राज्य के विषय में आपका क्या विचार है? मागध गुप्तों से अपने पास सेना और द्रव्य दोनों कम हैं किन्तु साहस विशेष है। यही कहावत है कि मति अति नीचि ऊंचि रुचि आछी चहिय अमी अग जुरै न छाछी।

कु गु —आपने गुप्त कुल के जान की लाज रख ली। मैं भी प्रयत्न करने में तिल मात्र न चूकूंगा। रही सैनिक योग्यता एवं सैन्य बल का प्रश्न इस पर विचार कीजिए। जैसी चाहेंगे वैसी आज्ञा देने अथच जोखिम लेने में इस राज्य को पीछे हटते हुए आप न देखेंगे।

वी से —जब स्वामी की ऐसी दया रहेगी तब युक्तियाँ सोचनी आपके दोनों वीर राजकुमारों सेनापति जी तथा मुझ सेवक का कार्य होगा। स्वामी का युद्ध विद्या ज्ञान भी कितना प्रौढ़ है सो मुझसे छिपा नहीं है।

कु गु —कब तक यशोधर्मन से मुठभेड़ की आशा करते हो?

वी से —अन्नदाता! इसमें समय अवश्य लगेगा। सब से पहले सैनिक बल की शिक्षा नवीन प्रकार से होगी। हूणों से दो बार युद्ध करके जो नये ढंग निश्चित हुए हैं उनके

अनुसार सैनिक शिक्षा और सामान जुगाने के काय होंगे। आसाम पराजित तो हो ही चुका है किंतु उस पर किसी का पूरा अधिकार है नहीं।

महा से —उसे जीतने का मैं कुछ दिनों से विचार किए हुए हू। यदि सब की सलाह और श्रीमान की आज्ञा हो तो यह काय पूरा करू।

कु गु —अवश्य अवश्य। मैं तुम्हारे उत्साह से बहुत प्रसन्न हुआ।

धी से —दूसरी बात यह है कि सोनभद्र के पश्चिम का मगध कहने को मागध गुप्तों के अधीन है किंतु उस पर उनका अधिकार नाम मात्र को है। ईशान वमन उसे आजकल में लेना चाहते हैं।

म से —जब आसाम मैं जाऊगा तब पिताजी भी कुछ काय करना चाहेंगे।

कु गु —अच्छा तो है पश्चिमी मगध पर दामोदर सेन सन्धान करें।

धी से —मैं स्वय ऐसे प्रान्तों पर चढ़ाई करनी भी न चाहूगा जिन से मेरे प्राचीन स्वामी की किसी प्रकार क्षति समझी जावे। फिर भी दोनों विजयों के लिए ऐसी युक्तियाँ निवेदन कर दूँगा कि कार्य मेरे जाने के बराबर ही हो जावै।

कु गु —बहुत ठीक है।

धी से —इन दोनों प्रान्तों की प्राप्ति से दल वृद्धि का भी कार्य सुचारु रूप से चलने लगेगा और ईशान वर्मन वाले राज्य के निकट पहुँच जाने से हमको उन पर आक्रमण करने की भी सुविधा रहेगी।

म से —ये सब युक्तियाँ अच्छी समझ पड़ती हैं। मेरी समझ में इतने कार्य सम्पादित हो जाने से आठ दस वर्षों के भीतर विष्णु वर्द्धन और ईशान वर्मन की शक्तियों का हम लोग सुचारु रूप से सामना कर सकेंगे।

वी से —आशा तो ऐसी ही की जा सकती है।

(सब का प्रस्थान पटोत्तोलन)

दृश्य तीसरा

[स्थान ग्राम ठाकुर की चौपाल का आँगन]

(ठाकुर इन्द्र दमन कुशक ब्राह्मण एक लोधा कल्लोल वणिक एक अहीर और सोनार आग के पास ताप रहे हैं)

ठाकुर—अब की सौ महराज! याक पानी बिना समौ सार काना ह्वइगा।

मह —काहे नाईं ठकुरउ! वये कि का कही? बरसति बरसति बुढाइगे मुला बरसवु न आवा। वइसी तउ असाढ़ म उहु झरझर लगाइनि कि पातवु मुसकिल व्हइगा अउ अइसी कुवाँर म आइ क याकइ पानी कि दगा दइगे।

लोधा—हम तउ स्यामजीरी बइदीन रहइ अइसि सासु फरी कि जनउ भुइ भरुहाति हती मुला याक पानी बिना उपज अधियाइ गइ।

अहीर—लॉक तउ वह भारी आई कि जनउ धानुइ धानु अफरि परी मुलौ हाथे न आवा।

लो —तुम तउ महराज जनउ उद् भये रहउ?

मह —का करी तुमरे तउ वइडा हता। छतिभरा ग्याडइ चढाये बइठ रहउ हमरे का हता जो बइति?

सो —तुमरे तउ भाइ वहु नागौड़ी हइ कि दिनइ भरे म डेढ़ डेढ़ बिगहा चाडि क डारि ति हइ।

ठा —अरे अकेली जोड़िही ते का होति हइ। घरहु म तउ कोई सलूकु करइया चही। लरिकऊ चिकनिया बने घूमति हइ ख्यात सारे क ज तइ नाईं हइ कि हइ कौनी घार ?

मह —येये तउ बातइ हइ। इहि की तना थ्वारइ कि लरिका खिम्यिन ते म्याड़ चढ़ावइ म जुनि परे तउ दुये दिन माँ खेते क रूपु निकसि आवा।

अ —इहु तउ महराज हये हइ। खली तउ मेहेन्ति माँगति हइ। सुन्तइ हुउ कि

उत्तम खेती जे हरु गहइ मद्धिम उनकी जे संग रहइ।

जमउ बूढ़ि गइ जानेउ तहाँ घरते पूछइ हरहइँ कहाँ ?

ठा —हम तउ ससुरै अपने रमतला म उखारी बवावा हइ। देखि तउ अच्छी परति हइ।

सो —यहि माँ ऊख सदइ खूब सभरति हइ। अरे क जोख ! बरउना कि बजारइ गये रहउ कि नाईं ? कुछु जानेउ उइन क का भाउ रहइ ?

बनि —जानिति काहे न ? साढ़ी पाँच कि दरि हसी।

मह —अउ बारी म ?

बनि —हुयाँ तउ सुना सवइ पाँच लागि रहइ।

लोधा—हम तउ हुवइ ते चले आइसि हइ सवा पाँच उहु नगु उर्दु ग रहइ कि कहति नाईं बति हइ। सधारन उहु तउ पाँच मन सात पसेरी हता।

बनि०—तउ यहइ होई। अब की हमार खेतु वतावइ म पछेलिगा पहिले जाना नाईं कि यत्तेहे म भर भराइ कै बर्सि परा कोई मजूरु न मिला।

मह —अरे आन्ति नाई हउ कि जब भुइ लोन चलइ पुरवाइ तब जानेउ बरखा रितु आई।

जोधा—(हस कर) ईतउ दुकान भरे ते मतलबु राखति हइ। खेत क तउ इनका इहु हालु हइ कि रहइ कुरम्याने गावइ चमराने ।

बनि —इहु तउ हये हइ हम का खाइ भरेक न्कौरिही वइ निकसति हइ।

सो —तुम तउ भाई! दुइ का खवाय क खाति हउ तुमारि नाई कहिति हइ। खतु तउ सौख ते केहे हउ।

ठा —अरे तुम हँ कौनु कम हउ जेत्ते खन निवाली हाथे म लइ लेति हउ तब चारि दिन का खचु कमाय क उठति हउ।

सो —हमारि तउ ठकुरउ तुम पंचन के बूते निबहे जाति हइ। चारि जने मारे जाति हउ बसि यसिही बात हइ।

मह —कहउ भाइ वमन! अब की साल जो काजीनाथन लीला हियां कराई जाति तउ कस होति? पारसाल असरौली मँ कस मजा आवा रहइ?

ठा —हुवां महराज! चारि जने मिलि कइ कामु करति हइ हियां कौनउ कामे म ठाढ़ होति हइ?

बनि —ठाढ़ सबइ हाइ असरौली वाले का हाथी दाँत के बने हइ? यहइ दुइ जने दौरइया होय क चही। तगादा कइ सबते आवइ।

सो —यह तउ सउख की बात हइ। हम तउ भाई दौरि सकिति हइ हां एकु साथी चही।

मह —यहि माँ तउ हमार छोन्कऊ बहुतु चपटति हइ। का तुम उनका लइ कइ दौरिहउ?

सो —यहि माँ का मुजाका हइ?

ठा —मुलु अब की साल सुनेउ नाईं कि यहै बार लड़ाई ठनइयाँ हइ।

मह —यह तउ भाई लुधे नाई रही! जब ते महराज बिसुन बरधन नाइ रहे हुइ तब ते गउड़ वाले महराज जोरु पकरे हुइ।

ठा —महाराजा हर बरधन तउ फउजउ म कामु करति हई।

सो —इनके बाप तउ कबहूँ फउज के नगीचे नाईंगे।

बनि —उइ तउ इहु मौबिला अपने महाराजा पर डारे रहै।

अ —मजेउ म तउ रहे।

ठा —अपनि अपनि मउज हइ। ई अपनी आँखी क धाखा मानति हइ।

मह —अच्छा जो ई बार लड़ाई भइ तउ खेत खरिहान उजरे जइहइ।

बनि —यह हुमन कि फउज तउ हाइ नाईं दूनउ कहतीते देसिही फउजइ हइ। नुकसानु न हुइ पाई।

मह —अउ फिरि जेत्ता कुछ हुइ जाई तिहि का मालिक मोजरउ तउ चाहईं।

ठा —तहूँ यारउ! सामानु मौबिला बचाये रहइ क चही काहूँ नोअ बिल्ला न होय?

मह —हम तउ भाई अपने समधयाने कि बार निकसि आब जब लड़ाई हुँ लेई तब लउटब।

अ —तुम्हार समधी भाई राजन क अस हइउ तउ हइ। हम ससुरइ कहसी आई?

ब —तुमरे घरइ का हइ जिहि का डेराति हउ? गाइन भइँसिन क कोई हाथु नाईं लगाय सकति हइ। खाले म कइ आयउ।

अ —अरे कइ का आउब हमहूँ लरिकन बिटियन ते वहै धार हइ रहब।

ठा —तुम तउ चले जइहउ ले हम पांव कहां जाई? यता रफड़ुडरु कहां धरी?

ब —सब जने मिलि कइ रहइ क होई। जइस निपटी आखा जाई देसइ के तउ लडन्तिहा हूँ कुछु डेरु थ्वारइ परा हइ।

जोधा—येहे तना सुदामति ते चला आया हइ कबहूँ पुरिखनउ क ई धास म कुछु गा नाई हइ।

ठा —जाति कइसे? पहिले गुप्तन क इन्तिजामु रहा फिरि महाराज आदित्य बरमन बने रहे। कोइ क पत्ता नाई हाला। जब ते महराज ईसान हइ तब ते अउरउ रंगति खिलि रही हइ।

पटाक्षेप

दृश्य चौथा

[स्थान युद्धस्थल]

(महाराजा ईशान बमन शब बर्मन और धर्मघोष का प्रवेश)

ई व —दखिये भाई जी! मागध गुप्तों के अपमान को अपना मान कर महाराजा कुमार गुप्त अनावश्यक युद्ध ठान बैठे हैं सम्बन्ध तक का विचार न किया।

ध दो —इस बार संग्राम स्थल की रगत कुछ बिगड़ी हुई भी देख पड़ती है।

ई व —बिगड़ी क्या अब की जो कुछ न हो जावे थोड़ा है। अज्ञान से भी स्वल्प ज्ञान बहुत बुरा है। सम्राट विष्णु वर्द्धन युद्ध से अनभिज्ञ थे किंतु अपनी कमी को समझ कर कभी समर के निकट नहीं आते थे।

श व —सम्राट् हर वर्द्धन तो स्वय युद्ध में आ धमके हैं।

ई० व —मैंने बहुत समझाया किन्तु न माने। अब सारा प्रबध तीन तेरह हो रहा है। हम तीनों की सेनायें तो अपनी अपनी जगहों पर डटे हुए हैं किन्तु उनकी टुकड़ी का स्थान रिक्त है। न जाने दल समेत कहाँ बिला गये हैं?

श व —यदि उसी ओर से शत्रु आक्रमण कर बैठे तो?

ध० दो —तो भय अवश्य है किन्तु अभी से इतनी चिन्ता की क्या आवश्यकता है? जो सिपाही उप सेनापति की आधिपत्य में गये हैं वे कुछ तो काम करके ही पलटेंगे।

(उप सेनापति का प्रवेश)

उ० से —महाराज! गजब हो गया। सम्राट् को शत्रुओं ने पकड़ लिया।

ई० व —हाय ऐसा कैसे हो गया?

उ से —उनकी सेना रात में मार्ग भूल कर शत्रु दल के निकट पहुँच गई वहाँ घिर कर थोड़े ही युद्ध के पीछे उसे आत्म समर्पण करना पड़ा।

ध दो —अब क्या किया जावे?

श० व —सम्राट् का उद्धार तो परमावश्यक है।

ई व —मैं कुछ काल से इसी शंका में था कि कोई कर्ण कटु समाचार मिलेगा। मेरी तिहाई सेना को अभी आज्ञा दो कि सेनापति के आधिपत्य में रिक्त स्थान को भरे। (शव वर्मन से) अपना दश सहस्र दल लेकर मैं दक्षिण से जाता हूँ और इतनी ही अपनी सेना लेकर उत्तर से तुम चलो अभी सम्राट का मोचन होगा।

श व —क्या हमारी सेनाओं का उपसेनापति नियन्त्रण करेंगे?

ई व —हाँ।

ध दो —ऐसे में यदि आक्रमण हो गया तो कैसी निबटेगी?

ई व —यदि शत्रु मर्म स्थलों को ताड़ कर पूर्णबल से धावा कर देगा तो पराजय निश्चित है।

ध दो —तो इस बार हमारा यश शत्रु की मूर्खता पर निर्भर है।

श व —और वीरसेन मूर्ख है नहीं।

ई व —समर कौशल में अपंडित तो उन चारों में से एक भी नहीं है।

ध दो —अर्थात् स्वयं कुमार गुप्त युवराज दामोदर गुप्त तत्पुत्र महासेन और सेनापति वीरसेन में से।

ई व —जी हाँ।

श व – फिर आप क्या आज्ञा दे रहे हैं?

ई व —पर किया क्या जावे? एकबार से भी सम्राट का मोचन गुरुतर कार्य है।

ध दो —फिर क्या निश्चय है कि शत्रु हमारी कमी जान ही लेगा?

ई व —व्यूह मैंने ऐसा बनाया है कि पराजय होने पर भी सेना का बृहदंश बच निकलेगा तथा हम लोग सुरक्षित रहेंगे।

ध दो —तो फिर चलिये आपही की आज्ञानुसार कार्य हो। जो बदा होगा सो होगा।

(चारों का प्रस्थान परदा बदल कर युद्ध का अन्य कोना दिखलाया जावे। दश साथियों सहित दामोदर गुप्त का प्रवेश साथियों में से दो आदमी बँधे हुये हरवद्ध न को पकड़े हैं)

दा गु —क्यों सम्राट महोदय! यह साम्राज्य का शौक कब से चर्राया था?

हर —विवश दशा में मुझ से ऐसी बातें कहनी क्या आपको शोभा देता है ?

दा गु —आपकी स्वतन्त्र अवस्था में इन्हें कहने का अवसर कब मिलता ?

ह व —और बिना कहे आपसे रहा नहीं जाता ?

दा गु —ज़रा ज़बान सम्हाल कर बोल बनिये ! नहीं तो अभी सर कलम कर दूंगा । तेरी यह मजाल कि राजराज बन कर जगत्प्रसिद्ध गुप्त सम्राट् का अपना करद महराज बनावे ! अब वे महाराजा भी नहीं कहला सकते !

ह व —(मौन रहता है)

दा गु —बोलते क्यों नहीं ? क्या जिह्वा में कुफुल लग गया है ?

ह व —राजगुप्त ! यह भी स्मरण रहे कि एक मुर्द्धाभिषिक्त सम्राट् का ऐसा अपमान कर रहे हैं ।

दा गु —मैं तो एक दीनबन्दी से बात करता हूँ ।

ह व —क्या दीनों से ऐसा ही व्यवहार योग्य है ?

दा गु —अच्छा कटुता छोड़ कर कहिये कि आपने पूर्व प्रजा होकर गुप्त सम्राट् का अपमान क्यों किया ?

ह० व —मैंने तो अपनी इच्छा से कुछ किया नहीं जो हुआ पिताजी की आज्ञा से ।

दा गु —एक हिसाब से यह भी ठीक है । आपने तो दशाओं के कारण अपने को सम्राट् पाया । आपका इसमें वास्तव में कोई दोष नहीं है ।

ह व —अच्छा तो अब आप क्या चाहते हैं ?

दा गु —मैं पूछता हूँ कि लबार ईशान की बातों में आकर आपके पिता ने अपने जगत्सेठ से प्रसिद्ध पद को तुच्छ मान कर साम्राज्य प्राप्ति की ओर क्यों कदम बढ़ाया ? क्या यह भी

खालाजी का घर था ? यह नहीं जानते थे कि इस मार्ग में असंख्य कटक हैं।

ह व —जितनी आपत्तियाँ इसमें हैं उनसे कुछ अधिक का अस्तित्व मुझे भासता था और है।

दा गु —फिर उस निकम्मे की बातों में क्यों आ गये ?

ह व —उन महाराजा श्रेष्ठ को मैं लबार या निकम्मा नहीं समझता।

दा गु —तो अपनी औंधी बुद्धि का फल भोगिये।

ह व —बुद्धि हीनता न होती तो सेना के पराजित हुए बिना ही आपकी मुट्ठी में क्यों आ फसता ?

दा गु —अब भी सम्राट बनने की लालसा है ?

ह व —बिलकुल नहीं मैं तो अब इस रास्ता के निकट न खड़ा हूँगा मेरा जगत्सेठ पद ही मुझे मुबारक रहे।

दा गु —तो खाओ शपथ कि सम्राट पद छोड़ते हो।

ह व —शपथ तीन जन्म न खाऊंगा।

दा गु —अभी क्या कह रहे थे ?

ह व —सत्य।

दा गु —तो शपथ से क्यों इनकार है ?

ह व —जो कुछ करूंगा अपनी इच्छा से। किसी से दब कर नहीं।

दा गु —इतना गर्व यदि मैं अभी आपका सर उड़ा दूं ?

ह व —ऐसा करने में आप इस काल सक्षम हैं किन्तु मेरी मति पर किसको अधिकार हो सकता है ?

दा गु —तो आपका सर उड़ेगा।

ह व —भले ही उड़े पर इस अनीति का आपको भी फल मिलेगा। ईश्वर गर्व प्रहारी है।

(आठ सैनिकों समेत शर्व वर्मन का प्रवेश)

श व —अहो भाग्य ! सम्राट् तो मिल ही गए । (शीघ्रता से हरवक्ष न का मोचन करता है) कहिए कोई कष्ट तो नहीं हुआ ?

इ व —(शर्व वमन से गले मिलकर) अब प्रसन्नता है ।

श व (दामोदर गुप्त से) यदि प्राण भारू न हों तो आप अभी यहां से प्रस्थान कर जाइये विलब न हो ।

दा गु —और तुम्हारे स्वामी का तथा तुम्हारा सर क्यों न उड़ादूँ ?

श व —यदि शक्ति हो तो ऐसा अवश्य कीजिए किन्तु फिर भी कहता हूँ कि बन्धु बध मै नहीं करना चाहता ।

दा गु —एक वैश्य का सेवक मेरा बन्धु नहीं हो सकता ।

श व —हे कटुबादी भाई ! तुम्हारे लिए मेरे चित्त में फिर भी दया शेष है ।

दा गु —शत्रु पर दया करनी कादरों का काम है ।

श व —तो निकल आइये एकाकी मै खड्ग उठाता हूँ और आप किसी सहायक को भी ले दोनों मिल कर मुझ अकेले से युद्ध कीजिए ।

दा गु ऐसी ही डींगों से तो तुम पिता पुत्र ने इस मूर्ख को बढ़ा रक्खा है ।

श व —तो अब युद्ध में विलंब न कीजिए ।

(दोनों में खड्ग युद्ध होता है दामोदर गुप्त का वध होता है गौड़ गुप्तों के दसों सिपाही भी युद्ध करते हैं और अपने आठों साथियों सहित लड़कर शर्व वर्मन उन्हें भी धराशायी करता है)

इ व —(शर्व से फिर गले मिलकर) धन्य मित्र शर्व धन्य ! (सैनिकों

से) अब इन गीदड़ों के शव आँख से आग करो। (सैनिक ऐसा ही करते हैं।)

श व —शीघ्र सेना में चलिए न मालूम उस ओर अभी क्या हो रहा हो?

(ईशान वर्मन का प्रवेश)

ई व —(हरवर्द्धन से गले मिल कर) बड़ी ही प्रसन्नता हुई कि शत्रुओं के हाथ से आप मुक्त हो गए।

ह व —यह कार्य प्यारे शर्ववर्मन के पुरुषार्थ से पूरे लगा है।

ई व —धन्य शर्व! तुमने वह कार्य पूरा किया जिसमें मुझे भी विलम्ब हुआ।

श व —(पिता के पैरों पड़ कर तथा उनके द्वारा उठाये जा कर) यह एक आकस्मिक घटना थी कि मैं आपसे कुछ पूर्व पहुँच गया।

ई व —अब उस ओर चलना अति शीघ्र आवश्यक है। हम दोनों के दलों ने दामोदर गुप्त की १५ सहस्र सेना तो काट डाली है किंतु उधर न जाने कैसी बीत रही हो? (ह व से) अब मेरा संग न छोड़िएगा।

(सब का प्रस्थान पट परिवर्तन से अन्य युद्ध कोण का प्रदर्शन)

(धर्मदोष और उपसेनापति का प्रवेश)

ध दो —युद्ध की दशा बिगड़ी हुई है सेनापतिजी! जिन जिन स्थानों पर आक्रमण से गड़बड़ का भय था उन्हीं उन्हीं पर वीरसेन ने दबाया है।

उ से —युद्ध तो हो ही रहा है किंतु अधिक देर ऐसा ही चलने से कहीं पूरी सेना घिर न जावे ऐसा भय है।

ध दो —इस काल सेनापति महाशय किस ओर हैं?

उ से —जिस ओर सम्राट की तृतीयांश सेना को रहना

था आज्ञानुसार उधर ही धावित हुए थे। अब निश्चय शीघ्र होना चाहिए। श्रीमान महाराज की युद्ध सम्बन्धी शिक्षाओं में मोड़ पड़ने पर यथावकाश दल को बचा ले आने की भी युक्तियाँ सम्मिलित थीं। अब उन्हीं से काम लेना योग्य है।

ध दो —क्या पराजय स्वीकार करके आज्ञा देनी ही पड़ेगी ?

उ से —युद्ध में जय पराजय तो कथन मात्र की है मुख्य प्रयोजन इतना रहता है कि शत्रु सेना की भारी से भारी क्षति हो और अपनी हानि कम से कम। इस काल महाराजा बहादुर सम्राट को खोजते हुये सेना से दूर निकल गए हैं। अब आप ही समस्त दल के नेता हैं।

ध दो —अच्छा अब अपनी समर कौशल की युक्तियों से अधिक से अधिक संख्या में फौज बचा कर मोड़ लेने की मेरी आज्ञा प्रचारित करो।

उ से —इस काल यही योग्य भी है। (आज्ञा प्रचारित करने बाहर जाता है)

(ईशान वर्मन शर्व वर्मन और हरवर्द्धन का प्रवेश)

ई व —कहिए धर्मदोषजी ! इधर का क्या समाचार है ? मार्ग में आते हुए चिन्ह तो बुरे देखे।

ध दो —अभी अभी सेना मोड़ने का हुक्म दे चुका हूँ। यदि अनुचित हो तो अब भी पलट सकता हूँ।

ई व —आज्ञा पलटाने से सारा दल नष्ट हो जावेगा। अब कोई अन्य युक्ति नहीं चल सकती। व्यूह के कारण हानि कम होगी।

ध दो —व्यूह निर्माण में तो आप महाभारत वाले द्रोणाचार्य के समान देख पड़ते हैं।

ह ष —उ हीं के वंशधर वाकाटक तथा पल्लव महाराजे आपकी माता और प्रपितामही के कुलस्थ पूर्व पुरुष भी तो हैं।

(पटाक्षेप)

दृश्य पाँचवाँ

[स्थान स्थाण्वीश्वर स हर्षवर्द्धन का अन्तरंग सभा भवन राजमाता और साम्राज्ञी का प्रवेश]

राजमाता—बेटी! क्यों चित्त चंचल करती है? रण समाचार सब अच्छा ही आवेगा।

साम्राज्ञी—माता जी क्या करूँ! चित्त का चांचल्य नहीं जाता। अपने बाप दादे कौन समर करते आये हैं? कक्कुजी ने साम्रा य तो उपार्जित किया कि तु युद्ध स्थल में कभी स्वयं पदार्पण नहीं किया।

रा मा —बेटी दुइ कि हार्यं यक संग भुवालू हसब ठठाय फुलाउब गालू। या तो साम्रा य चलावें या रण से ही बचें।

साम्रा —मैंने बहुत मना किया किन्त न माने; या तो कक्कुजी का इस आरम्भ ही से रोकते थे या स्वय रणांगण में उपस्थित हो गए।

रा मा —तो भय क्यों करती है?

साम्रा —विजय के से लक्षण नहीं देख पड़ते। यदि जीत हुई होती तो अब तक कुछ समाचार मिला होता।

रा मा —इतना अवश्य है। क्या कहूँ बेटी? तुझे तो समझा रही हूँ, किन्तु भीतर से हृदय मेरा भी धक धक करता है। स्थाणु भगवान से यही प्रार्थना है कि हार जीत कुछ भी हो मेरा बेटा जीता जागता मेरे सामने उपस्थित हो जावे।

(हर वर्द्धन का प्रवेश)

ह व —(माता के पैर छूकर और आशीर्वाद पा कर) क्या कहूं माता जी ! युद्ध से सजीव निकल ना सका हूं किंतु दुर्गति में कोई दशा शेष नहीं रही ।

रा मा —अरे क्या हुवा ? खैर बच तो आया ।

ह व —एक बार शत्रुओं का बन्दी होना पड़ा जिस दशा में बहुतेरी असह्य कटूक्तियाँ सुनीं । अब मेरा चित्त इस साम्राज्य के झमेले में लगता नहीं । आप लोग यों हीं खड़ी क्यों हैं ?

साम्रा —ऐसे ही बातें करती थी युद्ध समाचार न आने से विकलता विशेष थी । आपके बच आने से ऐसी प्रसन्नता हुई है कि पराजय का दुःख भी उसे दूर नहीं कर पाता ।

ह व —खैर घर में किसी का मुख प्रसन्न तो देख पड़ेगा । अरी कौन है ? (दासी का प्रवेश) जा आसनों का प्रबन्ध कर । (दासियां तीन कुर्सियाँ रखती हैं तीनों उन पर बैठते हैं)

रा मा —हां तुम अभी क्या कह रहे थे ? एक ही ठोकर खाकर ऐसे क्यों घबड़ाते हो ?

ह० व —जब से संवत् १२७ में ऐरकिण पर हूण विजय हुई और दूसरे ही साल बालादित्य के बंगाल भागने से गुप्त साम्राज्य डूबा । तब से भारतीय साम्राज्य का आसन चलदल की भाँति डोल रहा है ।

साम्रा —तोरमाण तो विजय पाते ही काशी में चल बसा किन्तु तत्पुत्र मिहिरकुल ने पन्द्रह १५ वर्ष पर्यंत साम्राज्य पद भोगा ही ।

रा मा —इतना समय ऐसे बड़े प्रश्नों में कथनीय नहीं है, बेटी !

ह ष —अनन्तर तीन वष बालादित्य तीन ही वर्ष प्रकटादित्य और ७ वर्ष पितृ चरण सम्राट् रहे मै भी चार ही वष यह पद भोग पाया ।

साम्रा —क्या अब आप सम्राट नहीं हैं ?

ह ष —मन प्रसन्न करने को भले ही स्ववर्गियों से अपने को राजराजेश्वर कहलवाऊ कि तु यह पद तो चार ही दिन हुए खोये चला आता हूँ । अब तो सम्राट् है तृतीय कुमार गुप्त गौडेश ।

रा मा —ऐसा क्यों होने लगा ? तुम्हें हुआ क्या है ? बेटा धीरज न छोड़ ; अति शीघ्र वही दिन फिर आजावेगा ।

ह० ष —ऐसा भी सम्भव है कि तु प्राणों तक की पूरी जोखिम लेकर कठिन परिश्रम करने से अ यथा नहीं । या तो तन मन धन यश आदि सभी जावगे जिसके साथ स्त्रियों बच्चों तक का मान एव प्राण जा सकता है या अस्थिर साम्रा य पद फिर से मिलेगा ।

रा मा —क्या वह ऐसा अस्थिर है ?

ह ष —आप ही दख लीजिये उपयुक्त पाचों सम्राटों में से केवल कक्कुजी के अतिरिक्त मरण पर्यंत किसी में यह पद स्थापित न रहा । ऐसे चल मान के लिये सब कुछ नक्की पर लगा दना क्या आप योग्य समझती हैं ?

सा —मैं तो नहीं समझती ; हमारा जगत्सेठ पद क्या कम है ? मुझे तो ये चरण चाहिये । इ हें खोकर यदि इ द्र पद भी मिले तो तुच्छ है ।

रा मा —मेरी बेटी ! तेरे वचन अक्षरश स य हैं कि तु मुझे ऐसा समझ पड़ता है कि भगवान मेरी गोदी हरी भरी

रक्खेगा और साम्राज्य पद भी हाथ से न जायगा। देख अकेले समुद्र गुप्त के प्रयत्नों से कितने दिन गुप्त वंश चला ? यदि बौद्ध मत के झगड़ों के कारण प्रजा से वैमनस्य न हो जाता तो अब भी कोई उसका बाल बाँका नहीं कर सकता।

ह व —उस काल दश में शाति विशेष थी जो बात अब नहीं है। एक ओर तो हूणों कुशानों और सासानियों के झगड़े उठ सकते हैं और दूसरी ओर गुप्त घराने के प्राचीन होने से उसका हटाना कठिन है। कुमारगुप्त महासेनगुप्त और वीरसेन ये तीनों अमोघ पराक्रमी हैं। इधर अपने यहाँ केवल काका ईशान पर भरोसा है।

सा —फिर माताजी ! आपही समझ लीजिये कि दूसरे के बल पर उपार्जित राज्य कै दिन चलेगा ? पूर्व पुरुषगण युद्धों का हाल क्या जानते थे और अपना ही उसमें क्या प्रवेश है ?

ह व —यही तो बातें हैं थोड़ा सा मार्ग भटक जाने से सेना समेत बन्दी होना पड़ा। प्राण भी चले जाते तो क्या आश्चर्य था ?

रा मा —किंतु साम्राज्य छोड़ देने से स्वर्ग में तेरे कक्कूजी को कितना दुख होगा ? मेरा पौत्र नर वर्द्धन क्या कहेगा ? यही न सोचेगा कि बाबा का कमाया हुआ राज्य पिता ने जान बूझ कर छोड़ दिया ?

ह० व —छोड़ कौन रहा है ? वह तो युद्धस्थल में छिन ही गया। अब पुनः प्राप्ति के प्रयत्न का प्रश्नमात्र शेष है। इसके लिये तन मन धन को दाँव पर लगाने की यदि आप आज्ञा दें तो मैं हटने वाला भी नहीं।

सा —फिर माताजी ! इतना और सोचने की बात है कि राज्य के विषय में किसी का भी इमान अट्ट प्रकारेण दृढ़ नहीं माना जा सकता । कौन कह सकता है कि महाराज ईशान का मन सदैव ऐसा ही रहेगा ?

ह व —फिर उनका शरीर भी कौन अमर है ? प्रायः ६२ वर्ष के होते आते हैं क्या पराश्रित रह कर भी अपने को सदैव की भाँति विजय लक्ष्मी अपनाये रहेंगी ? युवराज शाय सम्भवतः पसद न करें।

रा मा —अच्छा अपना बपौती का धन इस मामले में कितना गया होगा ?

ह व —उसकी मत पूछिए माताजी ! जितना गया था उसका अठगुना मिल चुका है ।

रा मा —फिर जाने दो जब तुम्हारा मन इस आरम्भ में नहीं जमता तब मैं ही हठ क्यों करू ?

ह व —मन की बात छोड़ दीजिए माताजी ! दशा मात्र पर जाइये । आशायें क्या हैं ? क्या मै नहीं चाहता कि उत्तर भारत भर में मेरी आज्ञा चले और देश देश के नरेशों की मुकुट मणियों से मेरे चरणों की शोभा देदीप्य मान रहे ? किंतु क्या करूँ ? अनिश्चित वरन् असम्भव भोगों के लिए सब कुछ खोना कौन बुद्धिमत्ता है ? आप ही विचार लीजिए ।

रा मा —नहीं कहना तुम्हारा ठीक है भला अपने सेठपन में तो भय नहीं होगा ?

सा —हाँ इस बात पर पुरा विचार कर लिया जावे । यदि लड़ना ही हो तो बड़े पद को छोड़ कर छोटे के लिए क्यों जोखिम ली जावे ?

इ० व —ये बातें बिलकुल ठीक हैं।

सा —तो इसमें क्या सम्मति है?

इ व —इस काल तो यही समझ पडता है कि मेरे हट जाने से या तो गौड गुप्त ही सम्राट रहेगा या फिर ईशान काका होंगे।

रा मा —वे तो प्रयत्न छोडने वाले दिखते नहीं।

इ व —तीन काल में नहीं। यदि वर्मन वंश का प्रभुत्व रहा तब तो किसी प्रकार का भय होगा नहीं और यदि गौडेश सम्राट रहे तो भी मेरे राज्यार्थ प्रयत्न छोड बैठने से धन के लिए वे भी न सतायगे क्योंकि ऐसी अनीति गुप्तों ने कभी की नहीं है।

रा० मा —समझ तो यही पडता है। अच्छा फिर ऐसा ही सही। मेरा मन सतुष्ट तो नहीं है किन्तु कोइ उपाय नहीं दख पडता।

(प्रतीहारी का प्रवेश)

प्र —जै जै सम्राट! महाराज इशान वर्मन और धर्मदोष दर्शनों के लिए बाहर प्रस्तुत हैं।

इ व —(मा और साम्राज्ञी से) क्या आप दोनों यहाँ विराजेंगी?

रा मा —नहीं अब हम दोनों जाती हैं। (दोनों का प्रस्थान)

इ व —(प्रतीहारी समेत बाहर जाकर ईशान वर्मन और धर्मदोष के साथ पलटता है तीनों कुर्सियों पर बैठते हैं)

ई व —सम्राट! अब तो आपका चित्त स्वस्थ है? मैं दो ही चार वर्षों के भीतर शत्रु मर्दन की पूर्ण आशा रखता हू आप मानसिक ग्लानि छोड दीजिए।

इ व —अब मेरा मन शुद्ध है; कोई ग्लानि शेष नहीं है किंतु एक भारी निश्चय कर चुका हू। आशा है आप भी सहमत होंगे।

ई० व०—कहिए क्या बात है? आपके वचन कुछ उद्विग्नता जनक हैं।

ह० व०—दृढ़ संकल्प होगया है कि मैं सिंहासन से हट कर अपना प्राचीन जगत्सेठ पद ग्रहण करूं; साम्राज्य तो अब है नहीं किंतु जो उसका नाम शेष है वह मैं आपही को सहर्ष अर्पित करता हूँ।

ई० व०—क्या कहते हैं? सम्राट्! ऐसा भी कहीं हो सकता है? संसार मुझे क्या कहेगा? इस वृद्धवय में इतना लालच ईश्वर से भी न देखा जावेगा।

ध० दो०—सम्राट! आप धैर्यच्युत न हों; स्मरण कीजिए जब आपके पूज्य पिता ने हमीं दोनों के विचार ग्रहण करके यह आरम्भ उठाया था तब क्या दशा थी और अब क्या है?

ह० व०—मैं तो उनके विचारों से तब भी सहमत न था; इस अस्थिर सम्राट् पद के लिए मैं तो अब यत्नवान हूँगा नहीं यह निश्चय है। यदि काकाजी को भी इसमें पड़ना न हो तो गौड़ गुर्तों के पास अधीनता सूचक पत्र जावेगा।

ई० व०—ऐसा!

ह० व०—यही बात है। मैं यह भी जानता हूँ कि आप इस उद्योग से किसी दशा में विरक्त न होंगे चाहे प्राण तक जावें।

ई० व०—सो तो प्रकट ही है मैं तो आपके लिए यह सिर तक बेचने को प्रस्तुत हूं।

ह० व०—इसमें मुझे अणुमात्र सन्देह नहीं है किंतु आप जानते हैं कि मेरा चित्त भारी जोखिम से स्वभावश दूर भागता है।

ध द्रो —इतना समझ लीजिए कि जब तक युवराज मात्र थे तब तक आपकी ऐसी बातें हम लोग हँस कर टाल देते थे किंतु अब आप ही सम्राट हैं।

ई व —बिना समझे बूझे कुछ कर बैठने में पीछे पछताना पड़ता है। संसार में मेरा भी मुँह काला हो जावेगा।

ह व — ऐसा क्यों होने लगा? अब मैं स्वयं हठ रहा हूँ तब आपको कौन दोष दे सकता है?

ध दा —मेरी सम्मति में केवल एक पराजय से इतना घबड़ाना अयोग्य समझा जावेगा।

ई व —इसलिए मिहिरकुल कितने बार नहीं हारा किन्तु अन्त पर्यन्त उसने प्रयत्न नहीं छोड़ा।

ह० व —आपने बहुत अच्छा उदाहरण दिया है काकाजी! आखिर उसकी गति क्या हुई? क्या वह आततायी न था?

ध दा —यदि विजय पा जाता तो सब उसी की प्रशंसा करते।

ह व —इस तर्क पर तो भारी से भारी सहसा कर्मियों के भी प्रयत्न श्लाघ्य होंगे।

ई व —अच्छा साम्राज्ञी और विशेषतया राजमाता की आज्ञा प्राप्त किए बिना मैं आपको ऐसा न करने दूँगा।

ह व —राज माता की मैं आज्ञा ले चुका हूँ; साम्राज्ञी भी सहमत हैं।

ई व —बिना मुझसे बात किए उनको ऐसी भारी आज्ञा न देनी चाहिए थी।

ह व —तो अब भी क्या हुआ है? आप उन्हीं को समझा लीजिए।

ई० व०—क्यों धर्मदोषजी ! क्या कुयें में ही भांग पड़ जायगी ?

ध० दो०—नहीं भाईजी ! वे ऐसी पाप आज्ञा कभी न देंगी; समझाने भर की देर है।

ह० ष०—तो उन्हीं पर रही।

(पटाक्षेप)

दृश्य छठवाँ

[स्थान प्रयाग। कुमार गुप्त का अन्तरंग सभा भवन]

(*कुमार गुप्त, महासेन गुप्त और वीरसेन का प्रवेश*)

कु० गु०—इस विषय पर केवल शुद्ध सामरिक दृष्टि से विचार करो।

म० गु०—इतना तो प्रकट है कि बाबाजी छै वर्षों से संसार में सम्राट कहला रहे हैं; अब भी प्रयाग तक अपनी सेना युद्ध कर रही है।

वी० से०—बहुत सा देश भी हाथ आ गया था; केवल मालवा कान्यकुब्ज, कश्मीर और पंजाब ईशान वर्मन के पास रह गये थे।

म० गु०—धर्मदोष ने इतना पौरुष दिखलाया कि उसी के बहत्तर प्रयत्नों से मालवा हमारे अधिकार से बाहर बना ही रहा।

कु० गु०—ये तो प्राचीन काल की बातें हैं; इस काल तो ईशान ने मध्य भारत की कौन कहे सोनभद्र पर्यन्त हमारे मगध तक पर अधिकार कर लिया है।

म० गु०—तो भी गौड़ अपना ही है और आसाम पर अधिकार शेष है।

कु० गु०—इतने से उसकी महती सेना का सामना क्या हम लोग कर सकेंगे ? केवल सामरिक दृष्टि से उत्तर दीजिये।

म० गु —इसका उत्तर ता प्रकट ही है किन्तु कभी कभी अन होनी भी घट जाती है।

कु गु —वीरसेन को कहने दा।

वी से —सामना ता नहीं हो सकता किन्तु जैसा युवराज का कथन है बिना लड़े हम उसकी अधीनता स्वीकार नहीं कर सकते।

कु गु —लड़ कर जीतने की क्या सौ में एक अंश भी आशा है?

वी० से —सो ता नहीं है।

कु गु —ता फिर सहस्रों सैनिकों को कटाने से क्या लाभ? इससे उल्टे शायद गौड भी छिनवावें।

म गु —आखिर इतने दिन सम्राट् रह कर आप अधीनता तो स्वीकार करेंगे नहीं?

कु गु —सो ता तीन जन्म असम्भव है।

वी से —तब सम्राट की आज्ञाओं का अर्थ समझ में नहीं आता।

कु गु —कहना तुम्हारा योग्य है बात यह है कि इन दिनों भारत में सिवा विष्णुवर्द्धन के कोई दूसरा यक्ति सम्राट रह कर नहीं मरा है।

वी से —यह क्या आज्ञा हो रही है? मरें शत्रु।

कु गु —ऐसी तो कामना है किन्तु संसार इच्छाओं पर न चल कर घटनाओं पर चलता है।

वी से —तो क्या होगा? मृत्यु भी तो पराधीन है।

कु गु —कायरों के पुरुषसिंह अग्नि की सहायता ले सकते हैं। मैं केवल अपने लिये विजयी सम्राट रह कर पावक प्रवेश करना अधीनस्थ महाराज होने से सौबार श्रेष्ठतर

समझता हूँ। स्वयं आपने सेनापति मात्र होकर ऐसा ही करना क्यों उचित माना था? क्या एक सम्राट् सैनेश से भी गया बीता है?

म गु —(हाहाकार करके रोता है)

कु० गु —बेटे! क्या करते हो? धैर्य धारण करो। अब तुम्हीं गौड़ेश हो अपने को सम्हालो। तुम मेरी आज्ञा से ईशान के साम्रा ्य में महाराज बनो तुम्हें कोई दोष नहीं है।

म गु —(रोते हुए) और आप ही ऐसा क्यों नहीं करते?

कु गु —तुम तो मेरी आज्ञा से करते हो मुझे कौन आज्ञा दे सकता है?

म गु —हाय बड़ी दादीजी! आपने ससार छोड़ने में क्यों शीघ्रता की? वे आज्ञा दे देतीं।

कु गु —अब तो वे हैं नहीं।

म गु —क्या उनकी सम्भव आज्ञा अमा य हो सकती है?

कु गु —यदि उनका एक भी कायरता पूर्ण वचन कोई बतला सके तो मैं ऐसी आज्ञा समझ लू।

श्री से —मै देखता हूँ कि मै ही इस राजघराने का मत्तक निकला। मेरे ही कारण युवराज दामोदर गुप्त का अमंगल हुआ और अब स्वय सम्राट् न जाने क्या सोच रहे हैं?

कु गु —तुमने तो मुझे साम्रा य पद दिलाया; युद्ध में निधन वीरों को प्राप्त होता है। यह अमागलिक बात नहीं। दामोदर ने सूयमडल विदार कर अमोघ स्वर्ग प्राप्त किया। मेरा रा ्य जितना कुछ था उससे अधिक अब भी है। तुम्हारा उपकार ही इस रा य पर है!

श्री से —क्या सम्राट् अपने निश्चय से किसी प्रकार भी नहीं हट सकते?

कु गु —तीन काल में नहीं।

वी से —मेरा तो यही प्राचीन प्रण है कि ईशान की अधीनता से मैं १७ वर्षों से पावक प्रवेश श्रेष्ठतर मानता आया हूँ। अब ६७ वर्षों का हो भी चुका हूँ। स्वामी के साथ ही अग्नि शिखा का चुम्बन करूंगा।

कु गु —क्या कह गये ? वीरसेन ! यह रहा सहा राज्य किसके बाहुबल पर ठहरेगा ?

वी से —शूर शिरोमणि युवराज महासेनजी के। मैं यों भी कितने दिनों का पाहुना हूँ ? स्वामी सेवक हसते हुए स्वर्ग में भी ऐसे ही पद भागगे।

म से —वीरसेन ! मैं न तो बाबाजी को ही छोड़ूंगा और न तुमको।

वी से —मैं भला अपने स्वामी को छोड़ सकता हूँ ? आपकी आज्ञा मुझ पर नहीं रिपुवर्षण पर बाध्य है।

कु गु —मैं तुम्हारे कनिष्ठ पुत्र रिपुवर्षण को ही बेटा महासेन का सेनापति बनाता हूँ आशा है कि इनके प्रयत्नों से गौड़ राज्य फिर फूले फलेगा।

वी से —अपने मुख से ऐसा कहना तो न चाहिये किन्तु जैसे द्रोणाचार्य ने अश्वत्थामा को सारी युद्ध विद्या सिखलादी थी वैसे ही मैं अपना सम्पूर्ण समर कौशल उसे अवगत करा चुका हूँ। अब वह मुझ से किसी अंश में कम नहीं है।

कु गु —बात तो बिलकुल ठीक है तब तुम्हारी अनुपस्थिति से राज्य में शायद संकट न पड़े।

वी से —एक विनती और है अन्नदाता ! यदि हम लोग प्रजा की दृष्टि में विधर्मी न होते तो यह साम्राज्य चिरस्थाई

होता। प्रार्थना यह है कि भविष्य के लिये उचित आज्ञा भी देदी जावे।

म से —आप ही की आज्ञा मान कर म आज से हिकूमत ग्रहण करता हूँ।

कु गु —मै आशीर्वाद दिये जाता हूँ कि अन्ततोगत्वा यही मेरा गौड़ गुप्तवंश फिर साम्राज्य पद प्राप्त करेगा और इसी में तीन अश्वमेघ कर्ता एव दक्षिण तक का विजेता सम्राट उत्पन्न होगा।

वी से —एवमस्तु।

दृश्य सातवाँ

[स्थान कान्यकुब्ज इ ष का बृहत सभा भवन]

(ईशान वमन सिंहासनमीन हैं शव वर्मन धमदोष दच कविराज और सेनापति बैठे हैं)

क रा —एक दिन मेरे मुख से स्वामी के विषय में सम्राट शब्द निकल जाने से मुझे चांचाय का दोष लगाया गया था अब आज्ञा हो कि किसकी बात सच निकली?

ध दो —क्या कहते है? कविराज! आप लोगों के मुख में साक्षात सरस्वती का वास रहता है; कभी बात झूँठ पड सकती है?

श व —आपकी तो त्रिकालज्ञों में गणना है।

क रा —बहुत बड़ाई हो चुकी दीनबंधु! अब मैं अपने दो छन्द सुना ही देना चाहता हू क्योंकि बड़े मनुष्यों में जब वार्तालाप होने लगता है तब मुझ ऐसों की कौन बूझता है!

वृद्ध—अच्छा पहले आपही से कार्यारम्भ हो।

कविराज—जो आज्ञा (पढ़ता है)

मौखरि सुबस अवतंस बीर तेरो जस
याधि रह्यो जैसे करै चन्द्र उजियारी है।
ईस और ब्रह्म के समान है इसान बम
भिन्नता द्वगनि कछु जाति न निहारी है।
वे तौ जग शासक विदित वेद शास्त्रन में
तुम हू उपाधि वहै पन करि धारी है।
नीच जन कछू उन तारे अनुकंपा करि
दस भरि तारयो आप जग बलिहारी है।
प्रबल प्रताप भासमान लौं प्रकासमान
जामें नृपगन छपि जात लघुतारे से।
याही ते न तरे सोहैं काऊ है सकत कहूँ
बाजैं जग तेरिही दुहाई के नगारे से।
सनमुख होतै सदा पानिप बिलायजात
शत्रु मंडली के लखियत मुख कारे से।
तेरी कित्ति फैलि रही दसहू दिसान
देस देस छहराय रहे सुजस फुहारे से।

ध दो —वाह कविराज! क्या ही समयानुकूल पढ़े हैं!

क रा —बड़ी गुण ग्राहकता हुई अन्नदाता।

ध दो —अब गायिका का भी गान हो जावै तब दूसरी बात चलै।

(एक परिचारक बाहर जाकर साजिन्दों समेत गायिकाओं के साथ पलटता है)

से प —(गायिका से) आज कार्य विशेष है सो तुम्हारा एक ही गाना हो सकेगा।

गायिका—(जो आज्ञा) गाती है।

जै ईशान वर्मन भूप

जासु भो उपमान कोई नहीं आन अनूप ॥जै॥

पूर्ण भारत वर्ष के सम्राट् हो विख्यात

कौन सरबरि करे तरी छिपी नहिं यह बात ॥जै॥

दच्छिनहु के भूप लखि थर्राय तेरो रूप

मचो जै जे कार जै ईशान वर्मन भूप ॥जै॥

हूणन को अधरम निरखि करि तिनको बल चूर्ण

प्रभु इसान वर्मन भयो भारत को परिपूर्ण ॥जै॥

देस विदेसन भूप गन मानत ताकी धाक

और सकल नृप देखियत जाके स मुख खाक ॥जै॥

(अभ्यर्थना कर करके गणिकाओं का साजिन्दों सहित प्रस्थान)

ई व —आज ईश्वर की असीम अनुकपा से भारत साम्राज्य फिर से संगठित हो चुका है। अब सभी विषयों पर विचार करके ऐसा सुन्दर प्रबन्ध हो कि भविष्य में भी कोई विघ्न खलता न उपस्थित हो सके।

श व —सबसे पहला प्रश्न यह है कि कहां कहां कौन कौन शासक नियत हों?

वृद्ध—यही अब सबसे बड़ी बात है।

ध दो —भारत में विदेशी आक्रमणों के समुद्र से इतर तीन मार्ग मुख्य हैं अर्थात आसाम खैबर और बोलनघाटियां। स्वयं आर्य तो तिब्बत होकर आये थे किंतु उधर का भय शेष नहीं।

से प —आसाम की ओर युद्धप्रिय निवासी कम हैं उधर से यदि कोई कभी आवेगा तो बसने भर को।

वृद्ध—समझ पड़ता है कि इस प्रश्न को उचित प्रकारेण बारे लगाने के लिए गौड़ बंगाल वालों से ही आशा की जा

सकती है। अपने को इसमें चिंता करनी न पड़ेगी; आखिर हैं तो दोनों अपने ही करद महाराज।

ई व —अवश्य, उधर दक्षिण में पल्लव चोल केरल और पांड्य लोग प्रधान हैं। इन दाक्षिणात्य वीरों से उत्तर भारतीय रंगमंच पर तो कोई खेल दिखेगा नहीं किंतु अपने देश को स्वतंत्र बनाये रखने में कई शताब्दियों पर्यंत ये लोग सक्षम समझ पड़ते हैं।

ध दो —बेशक; जो उत्तरी साम्राज्य दक्षिण में हाथ डालेगा उसे यश मिलना दुस्तर होगा।

श व —तो केवल बोलन और खैबर घाटियों का प्रश्न रह जाता है।

ई व —बोलन से शक लोग आये थे और भविष्य में भी आक्रमणकारी आ सकते हैं फिर भी जब तक सिन्ध देश पर अपना अधिकार न हो तब तक उसका प्रबंध नहीं हो सकता।

श व —प्रकृत तो ऐसा ही होता है सबसे मुख्य खैबर का दर्रा है। जब तक यह सुरक्षित है तब तक भारत स्वतंत्र समझो। सीदियन और कुशान दोनों का आना इसी मार्ग से हुवा।

ध दो —भविष्य के लिए भी यही मार्ग मुख्य है। उधर काश्मीर प्रान्त पर भी राज प्रतिनिधि नियत होना है।

ई व —मेरी समझ में स्वयं शव पेशावर में रहें तथा दत्तजी काश्मीर चले जावें क्यों न सेनापति जी?

से प —उचित आज्ञा होती है अन्नदाता!

ध दो —मैं भी यही ठीक समझता हूँ।

ई व —अच्छा एक यह बात ध्यान में आती है कि आप भी

बौद्धों का दिया हुआ यह धर्मद्रोष नाम छोड़ कर अपना वास्तविक नाम प्रत्यक्ष क्यों न चलाइये ?

ध द्रा —प्रत्यक्ष तो मेरा नाम है ही। इसी तुक पर मेरे अनुज का नाम दत्त रक्खा गया था। फिर भी देख ऐसा पड़ता है कि मेरा धर्मद्रोष नाम इस शताब्दी की भारतीय धार्मिक तथा राजनीतिक स्थितियों की कुंजी के समान रहेगा। भविष्य के दूरदर्शी भारतीय केवल इससे बहुत सी बातों का पता लगा सकेंगे। इसीसे यह शत्रुदत्त नाम भी मुझे प्रिय है।

ई ष —किस प्रकार ?

ध द्रा —हमारे बौद्ध भाई शताब्दियों में धार्मिक प्रसार के प्रयत्नों में बहुत रहे आये हैं।

ई ष —यहाँ तक तो कोई दोष है नहीं।

ध द्रा —दोष से क्या प्रयोजन ? यह तो उनका भारी गुण है किंतु इसी के अनुचित विस्तार से उनके द्वारा स्वदेश विमर्दन में विदेशी बौद्धों को सहायता मिली है।

श ष —कुशान सीदियन आदि इस कथन के प्रत्यक्ष प्रमाण हैं ही।

दत्त—इधर शक हूण और अन्तिम कुशान भी हिन्दू बने किन्तु इन धार्मिक विचारों से भारतीय हिंदुओं ने देश प्रेम न भुलाया।

ध द्रो —अब देखने की बात है कि मैंने बौद्ध धर्म के प्रतिकूल कुछ भी नहीं किया वरन् मेरा विचार यहाँ तक है कि इस महामत के कुछ कथन हमारे हिंदू सिद्धान्तों से श्रेष्ठतर हैं।

दत्त—इनके धार्मिक सिद्धान्तों का मान स्वयं गीता ने किया; आखिर बुद्धदेव भी तो हमारे दश अवतारों में से हैं।

ध० दो —फिर भी मैंने बौद्ध नरेशो के द्वारा भारतोद्धार की आशा न देख कर हिंदू प्रयत्न का साथ दिया तथा देशी भाइयों को भारतीय बौद्धों की अप्रियता की कमी को समझाया।

दत्त—इस विषय पर तो स्वयं मैंने भी प्रयत्न किया।

ध० दो —इतने ही पर ये अदूरदर्शी मुझे बौद्ध धर्म पर दूषण आरोपित करने वाला मूर्तिमान धर्मदोष कहने लगे। उन्होंने जैसे चन्द्रगुप्त मौर्य चाणक्य पुष्यमित्र आदि का देश प्रेम भुला कर केवल अपनी धर्मान्धता के कारण उनकी निंदा की वैसे ही मुझे धर्मदोष की उपाधि देदी।

ई० व —बेशक संसार यह देखेगा कि आपने भारतोद्धार के प्रयत्न में हाथ लगाया या धर्म का द्वेष किया।

ध० दो —बस संसार को इतना ही स्मरण दिलाने के लिये मैं यह नाम नहीं छोड़ना चाहता।

ई० व —नाम तो आपका अवन्ति वर्मन से भी चलेगाही तथापि कथन यथार्थ है। भवदीय प्रयत्नों के फल स्वरूप समय पर शर्व और इन्दु सम्राट् साम्राज्ञी होंगी तथा हम दोनों के इन्हीं स तानों का पुत्र अवन्ति वर्मन भी भारतीय सम्राट् होगा।

ध० दो —ईश्वर ने हमारे आपके मिलित प्रयत्नों का फल स तानों में भी स्थापित रक्खा है। क्या ही हर्ष की बात है! इधर बौद्धों की राजनीति ही तो उस धर्म को डुबाये देती है।

दत्त—वास्तव में चतुर जातियाँ धर्म फैलाने के बहाने विदेशों में राज्य प्राप्त करेंगी। इधर हमारे अदूरदर्शी बौद्ध भाई अन्य जातियों को सभ्य बनाने में ऐसे लगे कि स्वयं उन्हीं की

प्रजा बन बैठे। इतने पर भी उनका स्वदेश प्रेम जाग्रत न हुआ।

श व —इसी से तो सारा देश उनका शत्रु हो गया। एक यह भी बात मैं भरी सभा में प्रकट किये देता हूँ कि मूलतायें केवल बौद्धों में नहीं हैं वरन् अपने में भी बहुतायत से प्रस्तुत हैं।

दक्ष—इसे कृपया प्रकट रूप में समझा दीजिये।

ई व —मिहिरकुल और शेर शिकन ने अपने विचार में हम लोगों की कमियाँ बतलाई थीं वे आप लोगों को ज्ञात हैं हीं।

अ दो —यह बात! अच्छा आगे आज्ञा दीजिये।

ई व —हमारी जो विजय हुई है वह उनका मार्जन करने में अक्षम है। विजय उनके कारण न होकर उनके होते हुए भी अन्य क्षणिक कारणों की प्रबलता से हुई है। उन्हें दूर करने का सफल प्रयत्न यदि हम लोग न कर सकेंगे तो भविष्य में हमारी जातीयता नष्ट होने का खासा भय है।

दक्ष—यह बात नितान्त यथार्थ है सम्राट! इसमें क्या सन्देह है? हमारी सभ्यता में यह बुरा घुन लगा है; या तो हम इसे दूर कर सकेंगे या भविष्य में हिन्दू समाज गिर जावेगा।

(प्रतीहारी का प्रवेश)

प्र —जै जै सम्राट! हूण प्रजा के चार चौधरी उपस्थित हैं दर्शन चाहते हैं।

ई व —आने दो। (प्रतीहारी का प्रस्थान चौधरियों का प्रवेश चारों चौधरी कोर्निश करते हैं)।

प चौ —(हाथ जोड़ कर) आज हम लोग भी अपना सम्राट का

खिदमत में मुद्दआ लेकर हाजिर हुआ है। हुक्म हो तो अर्ज करे।

ई व —अवश्य कहो क्या कहना है?

प चौ —गरीबपरवर! हुजर का स तनत में सारा रियाया हर तरह से शाद व आबाद है बिरहमन हलमदार है छतरी लडाई का फन में उस्ताद है देश का रोजगार खूब चल रहा है और काम करने वाला को काम मिल रहा है; सिर्फ हम करीब पांच लाख हूण लोग अपने को सौत का सा लड़का समझता है। कहाँ जावे और क्या करै? हम तो अब हुजर ही का बच्चा हो चुका।

ई व —आप लोग निराश क्यों होते हैं? मै आपका शत्रु न होकर आपके दुष्कर्मों मात्र का रिपु था।

चौ — खुदाव द नेमत! हम मानता है कि हमने मुल्क पर जु म किया मगर उसका सजा को भी पहुँच गया। अब तो हम सुलह के कारबार मिस्ल दीगर रियाया के उठा चुका है; हम पर भी नेक नजर बख्शा जावै।

ई व —इसमें क्या स देह है?

प चौ —(सलाम करके) अब हम पल गया। अगर खयाल किया जावै तो हम लोग भी सदाशिव का पूजने वाला हिंदू ही है।

ई व —अब तुम्हारे ऐसे विचार हैं तो हम आज्ञा देते हैं कि आज से तुम भी हमारे भाई हुए। हमारे चातुर्वर्ण्य में आप लोग भी गुण कर्मानुसार मिल जावें जो जिस योग्य हो वह उस जाति में रोटी बेटी दोनों प्रकार से मिले। आज से कोई यह न जानेगा कि कौन हूण है और कौन शेष हिंदू? आप लोग अब हमसे अभिन्न हुए।

चौ चौ —(साष्टांग दंडवत करके) इतना मेहर का तो हम ख्वाब में भी खयाल नहीं कर सकता था।

इ व —इसलिए सम्राट् सगर ने सत्ययुग में उपद्रवी म्लेच्छों को भी प्रजा के रूप में राज्य में बसाया था शालिवाहन तथा अन्यान्य भारतीय नरेशों ने भी शकों को राटी बेटी के सम्बन्ध से अपनाया था। इसी प्रकार भारत वासी सीदियन और कुशान भी गुण कर्मानुसार हिंदु हो चुके हैं। आप लोगों के विषय में जो मेरी आज्ञा हुई है वह कोई नवीन बात न हो कर हम भारतीयों की प्राचीन प्रजानीति है। हम लोग दुष्कर्मों के शत्रु हैं सुधरे हुए दुष्कर्मियों के नहीं। चाहे हिन्दू हो चाहे बौद्ध चाहे और कोइ मतवाले फिर भी आप भारतीय के नाते से हमारे भाई हैं।

प चौ —अब हम लोगों को कोई खौफ न रहा। आज से दुनिया हिंदू में हुआ नाम न सुनेगा बल्कि अब हम भी पूरा हिन्दू है।

श व —(कविराज से) पितृ चरणों की आज्ञा से इस विषय पर आपने जो छन्द कहे थे वे भी सुना क्यों न दीजिए?

क रा —अच्छा सुनिए यह कथन स्वयं भारत कर रहा है।

जो मेरा होकर मुझे पिता कहता है
जो अपना ही घर समझ यहाँ रहता है।

वह नर वर बिस्वे बीस पुत्र मम जानो
उसका सुजन्म अति धन्य धरणि पर मानो।

सम्बन्ध वास्तविक अन्य देश से छोड़ा
मुझमें पाकर औरों से नाता तोड़ा।